बृहद्कल्प सूत्र की प्रस्तावना-

जिनाधिश नमस्यामि, मुनिकल्प मुद्धारितं॥ कुरुते भाषानुवाद बृहत्कल्पस्य च वार्तिक॥ १॥

जिन जिनेश्वर भगवानने मुनिवरों के लिये कल्प का उद्धार किया है उन जिनेश्वर को नमस्कार कर इस बृहद्कल्प सूत्र का हिन्दी भाषानुवाद करता हूं

इस सूत्र का नाम बृहद्कल्प है इस से अनुमान होता है कि किसी लघु कल्प सूत्र के अस्तित्व में यह सूत्र रचागया है इस के अर्थ इस प्रकार किये हैं—१ पाप रूप पटल का विनाशक, २ उत्सग अपवाद रूप दो प्रकार के मार्ग का दर्शक, ३ विविध प्रकार के आचार का कथक, ४ स्थापकर उत्थापक उत्थाप कर स्थापक, इत्यादि विविध प्रकार के सम्मासों का कथक होने से इसे बृहद्कल्प सूत्र कहा है कल्प नाम मर्याद (कानून) का है राज्य मर्याद जाति मर्याद धर्म मर्याद वगरह सर्व मर्याद में रहे हवे हा शोभनीक तथा सुख दायक होते हैं तैसे ही साधु धर्म के आचार के कल्प कथनी इस सूत्र में कही है यह कल्प खास जिनेश्वर-तीर्थंकर प्रणित हैं इस लिये जिनाज्ञाराधक मुनिवरों को उचित है कि इस में कथे कल्पानुसार ही अपनी प्रवृत्ती करके जिनाज्ञा के आराधक बने इस के सब ६ उद्देशे हैं

बृहद्कल्प की एक प्रत तो डा० भीमराम गेलाभाई की तरफ से जो सं० १९७१ साल में छपी है उस के आधार से तथा एक प्राचीन हस्त लिखित मेरे पास थी उस के आधार यथामति शुद्धि के साथ मूल व तदनुसार हिन्दी भाषानुवाद किया गया है इस में अशुद्धी हो उसे शुद्ध कर विद्वरों पठन करेंगे

बृहदकल्प सूत्र की विषयानुक्रमणिका

प्रथमोद्देशा

द्वितीय उद्देशा

तृतीय उद्देशा

पञ्चविंशतितम्-बृहद्कल्पसूत्र-द्वितीयच्छेद,

॥ प्रथमोद्देशा ॥

नोकप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा आमतालपलंबे अभिन्ने पडिग्गाहेत्तए ॥ १ ॥

ने कैसे निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थी को भ . क । नहीं कल्प सा करते हैं माधु साध्वी भिक्षार्थ गये तहां किसीने ताड (केल) क वृक्ष के फल कच्चे लम्बी अकृतिवाले उन के टुकड़े किये बिना बारीक छूरा किये बिना देवे ता से ग्रहण करने कल्पते नहीं हैं क्यों कि अपक्व हैं ● ॥ १ ॥ माधु साध्वी को

● यहां न शब्द निषेधार्थ में है २ कल्प शब्द आचारार्थ में है ३ निर्ग्रन्थ शब्द साधु के अर्थ में है ४ निर्ग्रन्थनी शब्द साध्वी के अर्थ में है निग्रन्थ दो प्रकार के कहे हैं १ निश्चय निर्ग्रन्थसो बारवे गुनस्थानवर्ती साधु और व्यवहार निग्रन्थ छठे गुनस्थान सेही गिने जाते हैं इस में जो यहां आचार कल्प की कथनी की है वह व्यवहार निग्रन्थ आश्रिय की है

● यहां मूल में ताड वृक्ष के फल कहे हैं जिस से ताड के फल ताडफली अथवा गोलफली जिस को बोलते हैं वह नहीं मानना क्यों कि वह तो गोल अकृतिवाला होता है तथा कच्चा कुछ भी काम में नहीं आता है और यहां तो लम्बी अकृतिवाला और कच्चा बिना छूरा किया ग्रहण नहीं करना ऐसा कहा है इस लिये लम्बी अकृतिवाला फल होता है व कच्चा काम में भी आता है इस लिये यहां केल के फल समझना चाहिये

इत्यनुक्रमणिका

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराजके सम्प्रदाय के बालब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलकऋषिजी ने सीर्फ तीन वर्ष में ३२ ही शास्त्रों का हिंदी भाषानुवाद किया उन ३२ ही शास्त्रों की १०००-१००० प्रतों को सीर्फ पांच ही वर्ष में छपवाकर दक्षिण हैदराबाद निवासी राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी ने सब को उन का अमूल्य लाभ दिया है।

निगम-

खेडसिवा, कव्वडसिवा मडबासिवा, पट्टणासिवा, आगरसिवा दोणमुहसिवा, निगमसिवा रायहाणिसिवा, आसमसिवा, सन्निवेससिवा संवाहसिवा घोससिवा, अंसियसिवा, पुडभेयणसिवा, सपरिक्खेवंसि अबाहिरियासि कप्पइ निग्गथाण हेम

स्थानक की विधी कहते हैं—साधु को १६ प्रकार की वस्ती में रहने के लिये बताते हैं—१ जहां राजा की तरफ से कर लेने में आता हो ऐसे ग्राम में, २ जहां गो आदि पशु का कर लेने में नहीं आता हो ऐसे नगर में, ३ जिस के चारों तरफ मट्टी का कोट हो ऐसे खेडे में, ४ जहां थोडे मनुष्यों की वस्ति हो ऐसे कबड में, ५ जहां अढाइ कोस पर्यन्त ग्राम दूर हो ऐसे मंडप में, ६ जहां सर्व प्रकार की वस्तुओं मिलती हो ऐसे पट्टन में, ७ जहां धातु की खदानों हो ऐसे आगर में, ८ जहां जलपथ और स्थलपथ दोनों हों ऐसे द्रोणमुख में, ९ जहां विशेष वणिक लोगों की वस्ती हो ऐसे निगम में, १० जहां राजा रहते हों ऐसी राजधानी में, ११ जहां तापसों की वस्ती हो ऐसे आश्रम में, १२ जहां सार्थवाही आकर उतरते हों ऐसे सन्निवेस में, १३ जो पर्वत के नितम्ब में ग्राम हों अथवा कृषी लोगों की अधिक वस्ती हो एसे संबाह में, १४ जहां गोपाल (गोवालीये) की वस्ती हो ऐसे घोष में, १५ ग्राम के मध्य में रहने का स्थान हो ऐसे अंसीये में, और १६ जहां देशान्तर ग्रामान्तर के वैपारी वो वेपारार्थ आकर रहे हो ऐसे पुरभय में यों उक्त सोले प्रकार के स्थान में साधु को रहना कल्पता है परंतु किस प्रकार रहना कल्पता है सो कहते हैं—

कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा आमेतालपलंबे भिन्नेपडिगाहेत्तए ॥ २ ॥
कप्पइ निग्गंथाणं पक्के तालपलंबे भिन्नेवा अभिन्नेवा पडिगाहेत्तए ॥३॥ नो कप्पइ निग्गंथीणं
पक्के तालपलंबे अभिन्ने पडिगाहेत्तए ॥ ४ ॥ कप्पइ निग्गंथीणं पक्के तालपलंबे भिन्ने
पडिगाहेत्तए सेविय विहिभिन्ने नो चेवणं अविहिभिन्ने ॥५॥ से गामंसिवा, नगरंसिवा

कोई केल के फल का टुकडा किया हो वह देवे तो ग्रहण करना कल्पता है ॥ २ ॥ साधु को पके हुए केले के फल कच्ची प्रकृतिवाले टुकडे करे हुवे भी तथा बिना टुकडे किये दोनों प्रकार के ग्रहण करना कल्पता है ॥ ३ ॥ साध्वी को पके हुए केले के फल कच्ची प्रकृतिवाले बिना टुकडे किये हुवे नहीं कल्पते हैं इस का खुलासा करते हैं साध्वी को पके हुए केले (फल) वृक्ष के फल कच्ची प्रकृतिवाले टुकडे किये हुवे हो तो ग्रहण करना कल्पते हैं किन्तु उन का विधि युक्त छोटे२ टुकडे किये होवेही ग्रहण करना कल्पते हैं परंतु जो उन फल का अविधी युक्त अर्थात् लम्बे दो ही टुकडे किये हों तो ग्रहण करने नहीं कल्पते हैं कारण कि उन फलों का आकार पुरुष चिन्ह जैसा होता है अखंड ग्रहण करते साध्वी का मन बिगडे तो ब्रह्मचर्य में दोष लगे, इस लिये अखंड लेना मना किया है ॥ ५ ॥ अब

ऊपर कच्चे फल बिना छेदन किये लेना निषेध किया वह सचित्तपने आश्रिय और यहां पके फल साधु को अखंड ग्रहण करने का कहा साध्वी को अखंड ग्रहण करने की मना किया इस का कारण प्रकृति विकृति आश्रिय जानना

वत्थए अतोवासासे बाहिंवासासे अतोवसमाणीणं अतो भिक्खायरिया बाहिंवसमाणीणं बाहिं भिक्खायरिया ॥९॥ से गामसिवा जाव रायहाणिसिवा एगवगडाए एगदुवाराए एगनिक्खमण पवेसाए नो कप्पइ निग्गंथाणय निग्गंथीणय एगयओ वत्थए ॥ १० ॥ से गामसिवा जाव रायहाणिसिवा अभिनिव्वगडाए अभिनिदुवाराए अभिनिक्खमणपवेसाए कप्पइ निग्गंथाणय निग्गंथीणय एगयओ वत्थए॥११॥नो कप्पइ निग्गंथीण आवण

को चार महिने रहना कल्पता है दो महिने कोट के अदर रहे और गौचरी भी अदर की ही करे, फिर दो महिने बाहर पूरे में रहे तब गौचरी बाहर की करे जहां रहे वहां ही की गौचरी करनी कल्पे जो अन्दर बाहिर दोनों स्थान की गौचरी करता दो महिने से ज्यादा रहना नहीं कल्पता है ॥९॥ उन ग्रामादि कोट सहित होवे उस के एक ही द्वार (दरवाजा) होवे अर्थात् प्रवेश करने का और निकलने का एक ही रास्ता होवे ऐसे ग्राम में साधु और आरजिका को एक ही स्थान रहना नहीं कल्पता है अर्थात् जो ऐसे ग्राम में साधु होतो साध्वी नहीं रहे और साध्वी होतो साधु नहीं रहे क्योंकि एक ही दरवाजा होने से एक ही रास्ता से थंडिलादि जाते आते लोगों का शंका उत्पन्न हो कि यह साधु साध्वी साथ ही जाते आते हैं इस का क्या कारण ॥ १० ॥ परन्तु उक्त ग्रामादि में अनेक दरवाजा या अनेक कोट सहित स्थान या अनेक रास्ते जाने आने के हो वहां साधु साध्वी का एकही साथ सबमें रहना कल्पता है॥११॥ प्रसिद्ध दुकानादि में, जहां मनुष्यों बहुत एकत्र हो बैठते हों ऐसा धर्म शालादि में, गल्ली के बीच में, तीन

गाथीण अतालित्तय घडिमत्तय धारेत्तएवा परिहरित्तएवा ॥१६॥ नो कप्पइ निग्गथाणं अतालित्तय घडिमत्तय धारेत्तएवा परिहारित्तएवा ॥१७॥ कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा चल चिलिमिलिय धारेत्तएवा परिहारित्तएवा ॥ १८ ॥ नो कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा दगतीरसि चिट्ठित्तएवा, निसीइत्तएवा, तुयट्टित्तएवा, निद्दाइत्तएवा,

घडी के आकार जैसा लम्बा और सकडा मुखवाला मातरीया (मात्रकरनेका भाजन) रखना भोगवना कल्पता है किन्तु वह अन्दर लीपा हुआ अर्थात् चूना (सपेदा) रोगान से रंगा हुआ चाहिये + ॥ १६ ॥ साधु को घडी जैसा लम्बा अंदर से रंगा हुआ मातरिया रखना ब्रह्मचर्यकी रक्षा के लिये नहीं कल्पता है ॥ १७ ॥ साधु साध्वी को शरीरादि कारण के लिये ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये आहारादि भोगने के लिये चिलमिलि (वस्त्रकी कोटडी) जैसा पडदा डोरी कर बांधने का वस्त्र पास रखना कल्पता है ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को जलाश्रय नदी तलाव कूपादि के कठ-तीर पर इतने काम करना नहीं कल्पते हैं उनके नाम १ खडारहना, २ बैठना, ३ शयन करना, ४ थोडी नींद लेना, ५ विशेष निद्रा लेना, ६ अशनादि आहार भोगवना, ७ पास मे रखा पानी पीना, ८ पक्वान मीठाई मेवादि खाना, ९ सुपारी लवंग मुखवासादि खाना [यह चारो प्रकार के आहार करना] १० दिशा जाना ११ पेशाब करना, १२ श्लेष्म

+ चोथा मुखत्राण प्रकाशीक म लिखेवी ऐसा भी आसन काम में आसकता है

गथीणं अतालिचय घडिमत्तय धारेत्तएवा परिहारित्तएवा ॥१६॥ नो कप्पइ निग्गथाणं अतालिचय घडिमत्तय धारेत्तएवा परिहारित्तएवा ॥१७॥ कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा चेल चिलिमिलिय धारेत्तएवा परिहारित्तएवा ॥ १८ ॥ नो कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा दगतीरसि चिट्ठित्तएवा, निसीइत्तएवा, तुयट्टित्तएवा, निद्दाइत्तएवा,

घडी के आकार जैसा लम्बा और सकड़ा मुखवाला मातरीया (मात्रकरनेका भाजन) रखना भोगवना कल्पता है किन्तु वह अन्दर से पका हुआ अर्थात् चूना (सफेद) रोगान से रंगा हुआ चाहिए + ॥ १६ ॥ साधु का घडी जैसा लम्बा अन्दर से रंगा हुआ मातरिया रखना ब्रह्मचर्यकी रक्षा के लिए नहीं कल्पता है ॥ १७ ॥ साधु साध्वी को शरीरादि कारण के लिये ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये आहारादि भोगवने के लिए चिलमिलि (वस्त्रकी कोटडी) जैसा पडदा धारी कर बांधने का वस्त्र पास रखना कल्पता है ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को जलाशय नदी तलाव कूवादि के कांठा तीर पर इतने काम करना नहीं कल्पते है उनके नाम १ खडारहना, २ बैठना, ३ शयन करना, ४ थोडी नींद लेना, ५ विशेष निद्रा लेना, ६ असनादि आहार भोगवना, ७ पास में रखा पानी पीना, ८ पक्वान मीठाई मेवादि खाना, ९ सुपारी लवंग मुखवासादि खाना [यह चारो प्रकार के आहार करना] १० दिशा जाना ११ पेशाब करना, १२ श्लेष्म

+ थोडा मुखवाला प्रकाशिक न मिलेतो ऐसा भी मातरा काम में आसकता है

॥ २२ ॥ कप्पइ निग्गथीण सागारियनिस्साए वत्थए ॥ २३ ॥ कप्पइ निग्गथाण सागारीय निस्साएवा अनिस्साएवा वत्थए ॥२४॥ ना कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा सागारिए उवस्सए वत्थए ॥ २५ ॥ कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा अप्प सागारिए उवस्सए वत्थए॥२६॥ ना कप्पइ निग्गथाण इत्थि सागारिए उवस्सए वत्थए ॥२७॥ कप्पइ निग्गथाण पुरिससागारिए उवस्सए वत्थए ॥ २८ ॥ नो कप्पइ निग्गथीण

रस को रहना नहीं कल्पता है ॥ २२ ॥ साध्वी का (उत्तम प्रकार की) गृहस्थनी की नेश्राय सहित रहना कल्पता है ॥ २३ ॥ साधु का गृहस्थ की नेश्राय सहित अथवा गृहस्थ की नेश्राय रहित (गृहस्थ पास हो अथवा नहीं हो दोनों प्रकार से) रहना कल्पता है ॥२४॥ साधु साध्वी को गृहस्थ रहता हो उस मकान में गृहस्थों के सामिल रहना नहीं कल्पता है (क्यों कि गृहस्थ के घर में स्त्री आदि रहने से सदोषता होनेका प्रसंग है तथा साधु के दर्शन करने कोई आवे और राखिका घर खुला रखने से चोरादि प्रवेश से गृहस्थ के वस्त्र भूषण वरतन वगैरह चोर ले जावे तो साधु ऊपर शंकादि दोष उत्पन्न होवे इत्यादि दोष जान गृहस्थ रहता हो उस घर में साधु को रहना नहीं कल्पता है, ॥ २५ ॥ किन्तु जिस मकान में गृहस्थ नहीं रहता हो जो मकान धन धान्य स्त्री नपुसक वालक पशु आदि रहित होवे एसे गृहस्थ के मकानमें साधु को रहना कल्पता है॥२६॥ साधु को जिस घर में स्त्री रहती हो उस घर में रहना नहीं कल्पता है ॥ २७ ॥ साधु को जिस घर में पुरुष रहता हो उस घर में रहना

मज्झंमज्झेणं गतुवरयए ॥३४॥ भिक्खूय अहिगरणं कट्टु ते अहिगरण अविओसवेय अविओमविय पाहुडे इच्छाए परोआढाएज्जा, इच्छाए परो नो आढाएज्जा, इच्छाए परो अब्भुट्ठेज्जा, इच्छाएपरोनो अब्भुट्ठेज्जा, इच्छाए परोवंदेज्जा, इच्छाए परो नो वंदेज्जा, इच्छाए परोसमुंजेज्जा, इच्छाएपरो नो समुंजेज्जा, इच्छाएपरो संवसेज्जा इच्छाएपरो नो संवसेज्जा, इच्छाए परो उवसमेज्जा इच्छाएपरो नो उवसमेज्जा, जे उवसमइ तस्स अत्थि आराहणा, का संयम नहीं है ॥ २४ ॥ साधु साध्वी को परस्पर का क्लेश उपशमाने का कहते है ॥ साधु साध्वी को किसी के साथ क्लेश हुवा हो परस्पर साधु साधु के, साध्वी साध्वी के, तथा साधु साध्वी के वो आपस में उस क्लेश की शान्ति से क्षमापना कर शांत कर देना योग्य है खमत खामना + किये बिना कुछ भी काम करना नहीं, भावार्थ जिन के साथ में क्लेश हुवा हो उसे खमाने जावे उस को खमाने जाते वह आदर सत्कार दो या मत दो उसकी इच्छा, वह साधु को आता देख खडा हो या मत हो उस की मरजी, वह साधु को वन्दना करो या मत करो उन की मरजी, वह साधु उस साधु के भेला आहार पानी करे या न करे उस की मरजी, वह सामिल रहे या न रहे उस की मरजी, वा अपन का खमावे या न खमावे उन की मरजी जो खमावेगा वह धर्म का आराधक होगा

+ दूसरे को क्षमाना और आप उस के अपराध को क्षमना उसे खमत खामना कहते हैं

पुरिस सागारिए उवस्सए वत्थए ॥ २९ ॥ कप्पइ निग्गंथीणं इत्थि सागारिए उवस्सए वत्थए ॥ ३० ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणं पडिबद्धाए सेज्जाए वत्थए ॥ ३१ ॥ कप्पइ निग्गंथीणं पडिबद्धाए सेज्जाए वत्थए ॥ ३२ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणं गाहावइकुलस्स मज्झंमज्झेणं गंतुं वत्थए ॥ ३३ ॥ कप्पइ निग्गंथीणं गाहावइकुलस्स

कल्पता है ॥ २८ ॥ साधु को जिस घर में पुरुष रहते हो उस घर में रहना नहीं कल्पता है ॥ २९ ॥ साध्वी को जिस घर में स्त्री रहती हो उस घर में रहना कल्पता है ॥ ३० ॥ साधु को प्रतिबद्ध मकान में अर्थात् जिस मकान के पास में से पुरुष के शब्द सुने जावे व स्त्री पति के वियोग के शब्द आते हो उस मकान में रहना नहीं कल्पता है ॥ ३१ ॥ साध्वी को पाडोस के घर में अकेली स्त्री रहती हो तो उस मकान में रहना कल्पता है ॥ ३२ ॥ जिस मकान में साधु रहे उस मकान का रास्ता गृहस्थ के घर में हो कर जाने का हो ऐसे मकान में साधु को रहना नहीं कल्पता है (क्यों कि स्त्री आदि खुल्ले अंग हो उनपर दृष्टि पडने से तथा कभी गृहस्थ के सामान मकान में रहने के शाप करे व चोरी पडे भी शंका का समय होता है) ॥ ३३ ॥ जिस मकान में साध्वी रही हो उस का रास्ता किसी का रहना हो ऐसे मकान में होकर जाने का हो तो वहां साध्वी को रहना कल्पता है क्योंकि स्त्री की रक्षा मालिक की शरम भी थोडी होती है और साध्वी को द्वार खुल्ले रखने भी नहीं कल्पते है इत्यादि कारन से द्वार खुल्ला

वेरज्ज विरुद्धरज्जंसि सज्जं गमणं सज्जं आगमणं सज्जं गमणागमणं करइकरतंवा साइज्जइ से दुहओ वीइक्कममाणे आवज्जइ चउम्मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं॥३८॥निग्गंथं च णं गाहावइकुलं पिंडवायं पडियाए अणुप्पविट्ठं केइ वत्थेणवा पडिग्गहेणवा कंबलेणवा

जो उस के उन राज्याधिकारीयों के आपसमें युद्ध चलता हो अथवा परचक्री राजा के आगमन से युद्ध चलता हो तो उस ग्राम में साधु साध्वी को रहना नहीं कल्पता है ऐसा प्रयोजन उपस्थित हुवे वहां से तत्काल विहार कर जाना उचित है परंतु उसग्राम में बारम्बार प्रवेश करना निकलना कल्पता नहीं है [क्योंकि राजादि लोगों का सेना का भीत उस वक्त उद्वेग में हान स तथा राजाओं के परस्पर संभ्रम होने से उस वक्त साधु साध्वी आवागमन करेतो सुभटों हाथी घोड़ की दौड़ा दौड़ में घात लगकर पटमाने अथवा आवे जिस से संयम की उपकरण की आत्मा की घात निपजे तथा साधु को सन्मुख आता देख अपशकुन मान कोइ उपसर्ग करे] इत्यादि कारणों से ऐसे ग्राम में बारम्बार प्रवेश करने की निकलने की मना की है इतने पर भी जो कोई साधु साध्वी इस प्रकार के ग्राम में निकलना प्रवेश करना स्वयं करना या दूसरे साधु साध्वीयों को करावेगा तो इन दोनों प्रकार में वीर भगवान की आज्ञा का उल्लंघन करने वाला माना जावेगा इसलिये वह चौमासिक प्रायश्चित का अधिकारी होता है ॥ ३८ ॥ साधु आहार आदि खानेपीने की वस्तु ग्रहण करने का गृहस्थ के घर गया तब गृहस्थ खाने पीने की वस्तु के सिवाय वस्त्र पात्र कम्बल देने का निमंत्रण तथा रजोहरण इत्यादि का आमंत्रण करेतो उस को साधु

जे न उवसमइ तस्स नत्थि आराहणा तम्हा अप्पणाचेव उवसमियव्वं से किमाहु भंते ? उवसमसारं सामण्णं ॥ ३५ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा वासावासासु चारए ॥ ३६ ॥ कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा हेमंत गिम्हासु चारए ॥ ३७ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा वेरज्जविरुद्ध रज्जंसि सज्जं गमणं सज्जं आगमणं सज्जं गमणागमणं करेत्तए जे खलु निग्गंथे वा निग्गंथी वा

और जो न क्षमावेगा वह धर्मका विराधक होगा इसलिये आत्मार्थी धर्मार्थी को स्वयं क्षमाना जरूर करना अपराधकी माफी जरूर मांगना शिष्य प्रश्न करता है कि वह तो नहीं खमावे और आपन उस को उपशमकर खमाना इस का क्या कारन है ? शिष्य ! सब जीवों के साथ क्षमाभाव रखना अपराध की माफी मांगनी सब जीवों साथ मैत्री भाव रखना यही संयम का सार है ॥ ३ ॥ साधु साध्वी को चौमास में चार महिने में एक ग्राम से दूसरे ग्राम विहार करना कल्पता नहीं है, क्योंकि वर्षा के कारण हरी आदि स्थावर चींटी आदि त्रस जीवों की उत्पत्ति बहुत हुई है उन की घात होने से संयम की घात होती है ॥ ३६ ॥ साधु साध्वी को शीतकाल उष्णकाल में एक ग्राम से दूसरे ग्राम विहार करना कल्पता है, क्योंकि एक स्थान रहने से स्नेहबंधन में पड अनेक दोष उत्पन्न होते हैं और विचरने से धर्मोपदेश से महा उपकार करसकते हैं ॥ ३७ ॥ किसी ग्राम का राजा मृत्यु पाया हो दूसरे को गादी प्राप्त नहीं हुई

अणन्नवेत्ता परिहार परिहरित्तए ॥ ४१ ॥ निग्गथिंस ण बहिया वियारभूमित्रा विहारभूमिंत्रा निक्खंत समाणि केइ वत्थेणवा पडिग्गहेणवा कम्बलेणवा पायपुच्छणे णवा उवनिमंतेज्जा, कप्पइ से सागारकड गहाय पवित्तिणी पायमूले ठवेत्ता दोच्चपि उग्गह अणुन्नवेता परिहारं परिहारित्तए ॥ ४२ ॥ ना कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा राओवा वियालेवा असणवा पाणवा खाइमवा साइमवा

की आमंत्रण करे तो पाडीयारा ग्रहण कर पवित्तनी (गुरुनी) पास आकर उन की सन्मुख रख पर नो आज्ञा दव वा दूसरी वक्त उन की आज्ञा ग्रहण कर उसे आप भोगवे ॥४१॥ साध्वी स्थानक बाहिर थंडिल अथवा स्वाध्याय करने की भूमिकामें जाती हो रास्ते में कोइ गृहस्थ वस्त्रादि उपकरण की आमंत्रण करतो पूर्वोक्त प्रकार पाडीयारा ग्रहण कर गुरुणी की पास रखे, जो गुरुणी आज्ञा देवे तो आप उसे भोगवे ॥४२॥ साधु साध्वी को रात्रि का अथवा सन्ध्या कालको चार प्रकार का आहार वगैरे वाहरना, गृहस्थ के घर से ग्रहण करना नहीं कल्पता है किन्तु दिन को देख कर रखे हुवे शैया स्थानक अथवा पाटपाटले पाटादि रात्री को ग्रहण करना कल्पता है अर्थात् कोइ गृहस्थ कहे कि दिन को तो यह मकान और यह पाट पाटले हमारे काम में आवेंगे परन्तु रात्रिको हमारे काममें नहीं आवेंगे जो आपको चाहीये तो रात्रीको आपग्रहण करना भोगवना, तब साधु उस मकान को और पाटादि को दिनको प्रतिलेखना करके (देखके) की बाधादि युक्त तो वह नहीं है

पायपुच्छणएणवा उवनिमंतेज्जा कप्पइ से सागारकडं गहाय आयरिय पायमूले ठवेत्ता दोच्चंपि ओग्गहं अणुन्नवेत्ता परिहारं परिहरित्तए ॥ ३९ ॥ निग्गंथंचणं बहिया वियारभूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खंतसमाणं केइवत्थेणवा कंबलेणवा पायपुच्छणेणवा उवनिमंतेज्जा कप्पइ से सागारकडं गहाय आयरिय पायमूले ठवेत्ता दोच्चंपि ओग्गहं अणुन्नवेत्ता परिहारं परिहरित्तए ॥ ४० ॥ निग्गंथिंच णं गाहावइकुलं पिंडवाय पडियाए अणुपविट्ठं केइवत्थेणवा पडिग्गहेणवा कंबलेणवा पायपुच्छणेणवा उवनिमंतेज्जा कप्पइ से सागारकडं गहाय पवत्तिणी पायमूले ठवेत्ता दोच्चंपि ओग्गहं

पडीयारा [खपणाणो रखेंगे नरखाते पीछादेंगे ऐसा कहकर] ग्रहण करके गुरुके पास आकर उनके सन्मुख रखे जो गुरु आज्ञा देवे कि इसे तुम रखो तो गुरु की दूसरी वक्त आज्ञा ग्रहण कर उसे आप भोगवे क्यों कि प्रथम गया तब आहार लेने की आज्ञा ले गया परन्तु वस्त्रादि लेने की आज्ञा ले नहीं गया था, इस लिये गुरु की आज्ञा बिना दूसरी वस्तु रखना नहीं कल्पता है ॥ ३९ ॥ साधु गुरु की आज्ञा से बाहर वाडस (दिशा मात्र) की भूमिका में जाता हुवा अथवा स्वाध्याय करने की भूमिका में जाता हुवा रास्ते में कोई गृहस्थ वस्त्रादि ग्रहण करे या उपकरण की आमंत्रणा करे तो वह पाडिहारा ग्रहण कर गुरु के सन्मुख रखे और गुरु भोगवने की आज्ञा देवे तो गुरु की आज्ञा से आप उसे भोगवे ॥ ४० ॥ साध्वी (प्रवर्तिनी की आज्ञा ले) गृहस्थ के घर आहार के लिये गई हो वहां कोई गृहस्थ वस्त्रादि उक्त उपकरण

अणमन्नेस्रा परिहार परिहरित्तए ॥ ४१ ॥ निग्गथिंच ण बहिया वियारभूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खतं समाणि केइ वत्थेणवा पडिग्गहेणवा कम्बलेणवा पायपुच्छणेणवा उवनिमंतेज्जा, कप्पइ से सागारकड गहाय पवित्तिणी पायमूले ठवित्ता दोच्चंपि उग्गह अणुन्नवेत्ता परिहार परिहरित्तए ॥ ४२ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा राओवा वियालेवा असणवा पाणवा खाइमवा साइमवा

की आमन्त्रण करे तो पादीवारा ग्रहण कर पवित्तनी (गुरुनी) पास आकर उन की सन्मुख रख यह जो आज्ञा देवे तो दूसरी वक्त उन की आज्ञा ग्रहण कर उसे आप भोगवे ॥ ४१ ॥ साध्वी स्थानक बाहिर वडिल अथवा स्वाध्याय करने की भूमिका में जाती हो रास्ते में कोइ गृहस्थ वस्त्रादि उपकरण की आमन्त्रण करतो पूर्वोक्त प्रकार पादीवारा ग्रहण कर गुरुणी की पास रखे, जो गुरुणी आज्ञा देवे तो आप उसे भोगवे ॥ ४२ ॥ साधु साध्वी को रात्रि को अथवा सन्ध्या कालको चार प्रकार का आहार वगैरे वाहरना, गृहस्थ के घर से ग्रहण करना नहीं कल्पता है किन्तु दिन को देख कर रखे हुए शैय्या स्थानक अथवा पाटपाटले पाटलादि रात्री को ग्रहण करना कल्पता है अर्थात् कोइ गृहस्थ कहे कि दिन को तो यह मकान और यह पाट पाटले हमारे काम में आवेंगे परन्तु रात्रि को हमारे काम में नहीं आवेंगे जो आपको चाहिये तो रात्री को आपग्रहण करना भोगवना, तब साधु उस मकान को और पाटादि को दिनको प्रतिलेखना करले (देखले) की शोभादि युक्त तो यह नहीं है

पायपुञ्छणणवा उवनिमतज्जा कप्पइ से सागारकड गहाय आयरिय पायमूले ठवेत्ता दोच्चंपि उग्गहं अणुन्नवेत्ता परिहारं परिहरित्तए ॥ ३९ ॥ निग्गंथंचणं बहिया वियारभूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खतेसमाणं केइ वत्थेणवा कंबलेणवा पायपुञ्छणेणवा उवनिमंतेज्जा कप्पइ से सागारकडं गहाय आयरिय पायमूले ठवेत्ता दोच्चंपि उग्गहं अणुन्नवेत्ता परिहारं परिहरित्तए ॥ ४० ॥ निग्गंथिंच णं गाहावइकुलं पिंडवाय पडियाए अणुपविट्ठं केइ वत्थेणवा पडिग्गाहेणवा कंबलेणवा पायपुञ्छणेणवा उवनिमंतेज्जा कप्पइ से सागारकडं गहाय पवत्तिणी पायमूले ठवेत्ता दोच्चंपि उग्गहं

वस्त्रादि [वस्त्र पात्र कम्बल पादपुंछन या रजोहरण] ग्रहण करके गुरु के पास आकर उनके सन्मुख रखे जो गुरु आज्ञा देवे कि इसे तुम रखो तो गुरु का दूसरी वक्त आज्ञा ग्रहण कर उसे आप भोगवे क्यों कि साधु गया तब आहार लेने की आज्ञा से गया परन्तु वस्त्रादि लेने की आज्ञा ले नहीं गया था, इस लिये गुरु की आज्ञा बिना दूसरी वस्तु रखना नहीं कल्पता है ॥ ३९ ॥ साधु गुरु की आज्ञा से बाहिर जंगल (दिशा जाने) की भूमिका में जाता हुवा अथवा स्वाध्याय करने की भूमिका में जाता हुवा रास्ते में कोई गृहस्थ वस्त्रादि उपकरण लेने का आमंत्रण करे तो वह वस्त्रादि ग्रहण कर गुरु के सन्मुख रखे और गुरु भोगवने की आज्ञा देवे तो गुरु की आज्ञा से आप उसे भोगवे ॥ ४० ॥ साध्वी (प्रवर्तिनी की आज्ञा ले) गृहस्थ के घर आहार के लिये गई हो वहां कोई गृहस्थ वस्त्रादि उक्त उपकरण

अणुन्नवेत्ता परिहार परिहरित्तए ॥ ४१ ॥ निग्गंथिंच ण बहिया वियारभूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खतं समाणि केइ वत्थेणवा पडिग्गहेणवा कम्बलेणवा पायपुच्छणे णवा उवनिमंतेज्जा, कप्पइ से सागारकड गहाय पवित्तिणी पायमूले ठवत्ता दोच्चपि ओग्गह अणुन्नवेत्ता परिहारं परिहारित्तए ॥ ४२ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा राओवा वियालेवा असणवा पाणवा खाइमवा साइमवा

की आमन्त्रण करे तो पाडीयारा ग्रहण कर पविजनी (गुरुनी) पास आकर उन की सन्मुख रख पद जो आज्ञा दय वा दूसरी वक्त उन की आज्ञा ग्रहण कर उसे आप भोगवे ॥४१॥ साध्वी स्थानक बाहिर थंडिल अथवा स्वाध्याय करने की भूमिकामें जाती हो रास्ते में कोइ गृहस्थ वस्त्रादि उपकरण की आमंत्रण करतो पूर्वोक्त प्रकार पाडीयारा ग्रहण कर गुरुणी की पास रखे, जो गुरुणी आज्ञादेवे तो आप उसे भोगवे ॥४२॥ साधु साध्वी को रात्रि को अथवा सन्ध्या कालको चार प्रकार का आहार वगेरे वाहरना, गृहस्थ के घर से ग्रहण करना नहीं कल्पता है किन्तु दिन का देख कर रखे हुए शैया स्थानक अथवा पाटपाटला पाटलादि रात्री को ग्रहण करना कल्पता है अर्थात् कोइ गृहस्थ कहे कि दिन को तो यह मकान और यह पाट पाटले हमारे काम में आवेंगे परन्तु रात्रिको हमारे काममें नहीं आवेंगे सो आपको चाहियेतो रात्रीको आपग्रहण करना भोगवना, तब साधु उस मकान को और पाटादि को दिनको प्रतिलेखना करके (देखल) की भोगवादि पुच्छे तो वह नहीं है

पायपुछणणवा उवनिमतजा कप्पइ स सागारकड गहाय आयरिय पायमूल ठवत्ता दोच्चपि आग्गह अणुन्नवत्ता परिहार परिहरित्तए ॥ ३९ ॥ निग्गथचण बहिया वियारभूमिवा विहारभूमिवा निक्खतसमाण केइवत्थणवा कबलणवा पायपुच्छणणवा उवनिमंतज्जा कप्पइ स सागारकड गहाय आयरिय पायमूल ठवत्ता दोच्चपि आग्गह अणुन्नवत्ता परिहार परिहरित्तए ॥ ४० ॥ निग्गंथिच ण गाहावइकुल पिंडवाय पाडयाए अणुपविट्ठ केइवत्थवा पडिग्गाहणवा कबलणवा पायपुछणवा उवनिमतज्जा कप्पइ से सागारकड गहाय पवत्तिणी पायमूल ठवत्ता दोच्चपि आग्गह

वस्त्रादि [पायगतो रखेते नस्वाता पीछादेंग एसा कहकर] ग्रहण करके गुरु के पास आकर उनके सन्मुख रखे जो गुरु आज्ञा देवे कि इसे तुम रखो तो गुरु की दूसरी वक्त आज्ञा ग्रहण कर उसे आप भोगवे क्यों कि प्रथम गया तब आहार लेने की आज्ञा से गया परन्तु वस्त्रादि लेने की आज्ञा ले नहीं गया था, इस लिये गुरु की आज्ञा विना दूसरी वस्तु रखना नहीं कल्पता है ॥ ३९ ॥ साधु गुरु की आज्ञा से बाहिर थंडिल (दिशा मात्र) की भूमिका में जाता हुवा अथवा स्वाध्याय करने की भूमिका में जाता हुवा रास्ते में कोई गृहस्थ वस्त्रादि ग्रहण करे या उपकरण की आमंत्रण करे तो वह पीछादेगा ग्रहण कर गुरु के सन्मुख रखे और गुरु भोगवने की आज्ञा देवे तो गुरु की आज्ञा से आप उसे भोगवे ॥ ४० ॥ साध्वी (पवित्तनी की आज्ञा ले) गृहस्थ के घर आहार के लिये गई हो वहां कोई गृहस्थ वस्त्रादि उक्त उपकरण

कप्पइ निग्गथस्स एग भियस्स राओवा वियालेवा बहिया वियारभूमिंवा विहार भूमिंवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा, ॥ कप्पइ से अप्पबिइयस्स वा अप्पतइयस्सवा राओवा वियालेवा बहिया वियारभूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा ॥ ४७ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणियाए राओवा वियालेवा बहिया वियार भूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा, कप्पइस अप्प बिइयाए वा अप्प तईयाएवा अप्पचउत्थीएवा राओवा वियालेवा बहिया वियार भूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा॥४८॥कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथी-णवा पुरत्थिमेण जाव अंगमगहाओ एत्तए,दक्खिणेण जाव कोसंबीओ एत्तए, पच्चत्थिमेण

या स्वाध्याय करने केलिये, याम के बाहिर, जाना कल्पता नहीं है, प्रवेश करना कल्पता नहीं है परंतु साधु को दो अथवा तीन साधु साथ जाना आना कल्पता है॥ ४७॥ अकेली साध्वी को रात्रि का अथवा संध्या को स्थानक के बाहिर अन्य मकान में तथा ग्राम बाहिर स्वाध्याय की भूमि में अथवा थंडिलादि भूमि मे जाना कल्पता नहीं है, कदापि अकेली काम हो तो दो तीन अथवा चार साध्वी साथ हो जाना आना कल्पता है ॥ ४८ ॥ साधु को पूर्व दिशा में अंग देश चंपा नगरी, मगध देश राजगृही नगरी तक, दक्षिण दिशा में कोसंबी नगरी तक, पश्चिम दिशा में थूणा नगरी और उत्तर दिशा में कुणाला नगरी तक यों चारों दिशा में

कप्पइ निग्गंथस्स एगाणियस्स राओ वा वियाले वा बहिया वियारभूमिं वा विहार भूमिं वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ कप्पइ से अप्पबिइयस्स वा अप्पतइयस्स वा राओ वा वियाले वा बहिया वियारभूमिं वा विहारभूमिं वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ ४७ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणियाए राओ वा वियाले वा बहिया वियार भूमिं वा विहारभूमिं वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, कप्पइ से अप्प बिइयाए वा अप्प तइयाए वा अप्पचउत्थीए वा राओ वा वियाले वा बहिया वियार भूमिं वा विहारभूमिं वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ ४८ ॥ कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथी-णवा पुरत्थिमेणं जाव अंगमगहाओ एत्तए, दक्खिणेणं जाव कोसंबीओ एत्तए, पच्चत्थिमेणं

या स्वाध्याय करने के लिये, ग्राम के बाहिर, जाना कल्पता नहीं है, प्रवेश करना कल्पता नहीं है परंतु गरजी पड़े तो दो अथवा तीन साधु साथ आना जाना कल्पता है ॥ ४७ ॥ अकेली साध्वी को रात्रि को अथवा संध्या को स्थानक बाहिर अन्य मकान में तथा ग्राम बाहिर स्वाध्याय की भूमी में अथवा थंडिल भूमी में जाना कल्पता नहीं है, कदाचित् अवश्य काम हो तो दो तीन अथवा चार साध्वी साथ हो जाना आना कल्पता है ॥ ४८ ॥ साधु साध्वी को पूर्व दिशा में अंग देश चंपा नगरी, मगध देश राजगृही नगरी तक, दक्षिण दिशा में कोसंबी नगरी तक, पश्चिम दिशा में थूणा नगरी और उत्तर दिशा में कुणाला नगरी तक यों चारों दिशा में

॥ द्वितीय उद्देशा ॥

उवस्सयस्स अंतो वगडाए सालीणिवा वीहीणिवा मुग्गाणिवा मासाणिवा, तिलाणिवा कुलत्थाणिवा, गोधूमाणिवा, जवाणिवा जवजवाणिवा, ओखिण्णाणिवा, विक्खि ण्णाणिवा, विइगिण्णाणिवा विप्पइण्णाणिवा, नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अहालन्दमवि वत्थए ॥ १ ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा नो ओखिण्णाइ नो विक्खिण्णाइ नो विइगिण्णाइ नो विप्पइण्णाइं रासिकडाणिवा पुंजकडाणिवा, भित्तिकडाणिवा,

उपाश्रय स्थानक के अन्दर आने जाने बैठने शयनादि स्थान में—१ शाल, २ वृही (शाली की जाति) ३ मूंग, ४ उड़द ५ तिल, ६ कुलत्थ, ७ गहूं, ८ जव ९ ज्वार इत्यादि धान्य बिखरे हुवे होवें पसरे हुए होवें, पांव रखने की जगह न होय, इस प्रकार के स्थानक में पानी से भींजी हुई हाथ रखा सूके इतनी देर भी रहना नहीं रहना क्यों कि साधु के लिये अन्य कोई भी आनागमन करे तो उन की अयत्ना होवे ॥ १ ॥ परंतु उक्त प्रकार के स्थानक में धान्य का संग्रह तो किया है परंतु बिखरा हुवा नहीं है, सर्व स्थान पसरा हुवा नहीं है, पांव अच्छी तरह स्थापनकर आवागमन कर सके एसा हो अथवा उस स्थानक के एक प्रदेश में उस का अम्बा ढग लगाया हो, ऊंचा ढग किया हो, भींत के

१ जिस मकान में साधु साध्वी रहे उसे उपाश्रय अथवा स्थानक कहते हैं

॥ द्वितीय उद्देशा ॥

उवस्सयस्स अतो वगडाए सालीणिवा वीहीणिवा मुग्गाणिवा मासाणिवा, तिलाणिवा कुलत्थाणिवा, गोधूमाणिवा जवाणिवा जवजवाणिवा, ओखिण्णाणिवा, विक्खि ण्णाणिवा, विइगिण्णाणिवा विप्पइण्णाणिवा नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अहालंदमवि वत्थए ॥ १ ॥ अहपुण एवं जाणेज्जा नो ओखिण्णाइं नो विक्खिण्णाइं नो विइगिण्णाइं नो विप्पइण्णाइं रासिकडाणिवा पुंजकडाणिवा, भित्तिकडाणिवा,

उपाश्रय स्थानक के अन्दर आने जाने बैठने शयनादि स्थान में—१ शाल, २ वृही (शाली की जाति) ३ मूंग, ४ उड़द ५ तिल, ६ कुलत्थ, ७ गहूं, ८ जव ९ जवार इत्यादि धान्य बिखरे हुवे होवें पसरे हुए होवें, और रखन की जगह न हाय, इस प्रकार के स्थानक में पानी से भींजी हुई हाथ रखा सूके इतनी देर भी खड़ा नहीं रहना क्यों कि साधु के लिये अन्य कोई भी आवागमन करे तो उन की अयत्ना होवे ॥ १ ॥ परंतु उक्त प्रकार के स्थानक में धान्य का संग्रह तो किया है परंतु बिखरा हुवा नहीं है, सर्व स्थान पसरा हुवा नहीं है, और अच्छी तरह स्थापनकर आवागमन कर सके ऐसा हो अर्थात् उस स्थानक के एक प्रदेश में उस का अच्छा ढग लगाया हो, ऊंचा ढग किया हो, भींत के

१ जिस मकान में साधु साध्वी रहे उसे उपाश्रय अथवा स्थानक कहते हैं

जाव थणाविलियाओ एत्तए उत्तरेण जाव कुणालाविसयाओ एत्तए एयावयाए कप्पइ एयावयाव आरिए खेत नाम कप्पइ एत्तोबहिं तेणपरं जत्थ नाण दंसण चरित्ताइ उस्सप्पंति ॥४९॥ त्तिबेमि ॥ कप्प पढमो उद्देसो सम्मत्तो ॥ १ ॥ *

इतनी सीमा तक विहार करना कल्पता है क्यों कि इतनी दूर तक ही आर्य क्षेत्र है इस उपरांत अनार्य देश है (उस में जाना न कल्पे) यदि वहां जो ज्ञानादि गुण की घात होती देखने में आवे तो न जावे) परंतु अपने ज्ञानादि गुणों की घात न होवे उपकार का कारन होवे मालूम हो तो जाना कल्पता है॥ ४९ ॥ इस प्रकार सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी से कहते हैं कि अहो जम्बू ! जिस प्रकार मैंने श्री महावीर भगवान के मुखारविंद से सुना है उस ही प्रकार मैंने तुम से यह कथन कहा है, परंतु मेरी स्वयं की मति कल्पना कर नहीं कहा है इति वृहत्कल्प सूत्र (बृहत्कल्प) का प्रथम उद्देशा संपूर्ण ॥ १ ॥ ० ०

॥ द्वितीय उद्देशा ॥

उवस्सयस्स अंतो वगडाए सालीणिवा वीहीणिवा मुग्गाणिवा मासाणिवा, तिलाणिवा कुलत्थाणिवा, गोधूमाणिवा जवाणिवा जवजवाणिवा, ओखिण्णाणिवा विक्खिण्णाणिवा, विइगिण्णाणिवा विप्पइण्णाणिवा, नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अहालंदमवि वत्थए ॥ १ ॥ अहपुण एवं जाणेज्जा नो ओखिण्णाइं नो विक्खिण्णाइं नो विइगिण्णाइं नो विप्पइण्णाइं रासिकडाणिवा पुंजकडाणिवा, भित्तिकडाणिवा,

उपाश्रय[1] स्थानक के अन्दर आने जाने बैठने शयनादि स्थान में—१ साल, २ व्रीही (साली की जाति) ३ मूंग, ४ उड़द ५ तिल, ६ कुलत्थ, ७ गहूं, ८ जव ९ ज्वार इत्यादि धान्य बिखरे हुवे होवें पसरे हुवे होवें, पांव रखने की जगह न होय, इस प्रकार के स्थानक में पानी से भींजी हुई हाथ रखा सूके इतनी देर भी खड़ा नहीं रहना क्यों कि साधु के लिये अन्य कोई भी आनागमन करे तो उन की अयत्ना होवे ॥ १ ॥ परन्तु उक्त प्रकार के स्थानक में धान्य का संग्रह तो किया है परन्तु बिखरा हुवा नहीं है, सर्व स्थान पसरा हुवा नहीं है, पांव अच्छी तरह स्थापनकर आनागमन कर सके एसा हो अर्थात् उस स्थानक के एक प्रदेश में उस का लम्बा ढग लगाया हो, ऊंचा ढग किया हो, भींत के

१ जिस मकान में साधु साध्वी रहे उसे उपाश्रय अथवा स्थानक कहते हैं।

उवस्सयस्स अतो वगडाए सुरावियड कुंभेवा सोवीरय वियडकुंभेवा, उवनिक्खित्तेसिया, नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अहालंदमवि वत्थए हुरत्थाय उवस्सय पडिलेहमाणे नोलभेज्जा, एवं से कप्पइ एगरायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पइ परं एगरायाओवा दुरायाओवा वत्थए, जेतत्थ एगरायाओवा दुरायाओवा परं वसेज्जा से संतरा छेएवा परिहारेवा ॥ ४ ॥ उवस्सयस्स अतो वगडाए सीओदग वियड कुंभेवा, उसिणोदग वियडकुंभेवा उव निक्खित्तेसिया, नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अहालंदमवि वत्थए,

जिस उपाश्रय स्थानक में गृहस्थने अचित्त दारू-मदिरा के घडे स्थापन किये हो, अचित्त ताडी (सेंदी) के घडे स्थापन किये हो ऐसे स्थान में साधु साध्वी को क्षणमात्र भी रहना नहीं कदापि ग्राम के अंदर या ग्राम की बाहिर गवेषना (शोधन) करने दूसरा कोई स्थानक नहीं मिले और वहां रहने की जरूरत हो तो ऐसे स्थान में साधु साध्वी को एक रात्रि अथवा दो रात्रि से ज्यादा रहना कल्पे नहीं यदि कदापि साधु साध्वी उक्त प्रकार के स्थानक में एक दो रात्रि उपरांत जितने दिन रहे उतने दिन का संयम के छेद का या परिहारिक तप का प्रायश्चित आवे ॥ ४ ॥ जिस स्थान उपाश्रय में गृहस्थने ठंडा अचित्त पानी के घडे भरे रखे हो, गरम अचित्त पानी के घडे भर रखे हो, ऐसे स्थानक में भी साधु

अता वगडाए सव्वराइए पईव दिप्पेज्जा नो कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा अहा लदमवि वत्थए हुरत्थाय उवस्सय पडिलेहमाण नो लभज्जा, एवं से कप्पइ एग रायंवा दुरायंवा वत्थए, नो से कप्पइ परं एग रायाओवा दुरायाओवा वत्थए, जं तत्थ एग रायओवा दुरायाओवा परं वसेज्जा से संतरा छेएवा परिहारेवा ॥७॥ उवस्सयस्स अंतो वगडाए पिण्डएवा लोयए वा खीरंवा दहिंवा सप्पिंवा नवणीएवा तेल्लेवा फाणियंवा पूयंवा सक्कुलीवा, सिहिरिणिवा, ओक्खिण्णाणिवा, विक्खिण्णाणिवा विइगिण्णाणिवा विप्पइण्णाणिवा, नो कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा अहालंदमवि

के अंदर सर्व रात्रि दीपक जलता हो उसस्थानकमें साधु साध्वी को रहना कल्पता नहीं है कदाचित अन्य स्थान नहीं मिले और रहने की जरूर हो तो वहां एक दो रात्रि से ज्यादा नहीं रहे, जो ज्यादा रहे तो जितनी रात्रि रहे उतने दीक्षा का छेद या तप का प्रायश्चित आवे ॥ ७ ॥ जिस स्थानक में मिष्टानादी का पिंड स्थापन किया हो, शक्कर आदि स्थापन किया हो, क्षीर-दूध, दही, नवनीत-मक्खन, तेल, गुड़ मालपूवे तिलादि की पापड़ी मद्य आदि पक्वान्न, इतने प्रकार की वस्तु के मटके आदि बरतन भरकर रखे हों अथवा इन के बरतनों बिखर कर रखे हो सर्व मकान में भरे हुवे हों पांव रखने की जगह न हो ऐसे स्थान में साधु साध्वी को पानी से भीजी हाथ की रेखा सूके इतनी देर भी सदा नहीं रहना ॥ ८ ॥

हुरे यावि उवस्सए पडिलेहमाणे नो लभेज्जा एवं से कप्पइ एगराइयं दुराइयं वत्थए जे तत्थ एग राइयाओ वा दुराइयाओ वा वत्थए नो से कप्पइ पर एग राइयाओ वा दुराइयाओ वा वत्थए जे तत्थ एग राइआ वा दुराइआ वा पर वसज्जा से सन्तरा छेए वा परिहारे वा ॥ ५ ॥ उवस्सयस्स अन्तो वगडाए सव्वराइए जोइ झियाएज्जा नो से कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अहा लन्दमवि वत्थए हुरत्थाय उवस्सए पडिलेहमाणे नो लभेज्जा एवं से कप्पइ एगरायं वा दुरायं वा वत्थए नो से कप्पइ पर एग राइयाओ वा दुराइयाओ वा वत्थए जे तत्थ एग राइयाओ वा दुराइयाओ वा पर वसज्जा से सन्तरा छेए वा परिहारे वा ॥ ६ ॥ उवस्सयस्स

साध्वी को रहना नहीं कल्पता है जो कदाचित् ऐसा ही अवसर आवे अर्थात् प्रमादि के बाहिर या अंदर उपास करने को दूसरा स्थानक न मिले और वहां रहने की जरूर हो तो उस स्थान में एक दो रात्रि से ज्यादा नहीं रहना, जो ऐसे स्थान में एक दो रात्रि उपरांत जितना काल रह उसने ही कालका दीक्षा का छेद आवे अथवा परिहारिक तप का प्रायश्चित आवे ॥ ५ ॥ जिस उपाश्रय के अंदर सर्व रात्री अग्नि प्रज्वलित होती हो तो ऐसे स्थान में भी साधु को रहना कल्पता नहीं है कदाचित् गवेषना करते दूसरी जगह न मिले और वहां रहने की जरूरत हो तो एक दो रात्रि से ज्यादा नहीं रहे जो कदाचित् रहे तो जितने दिन वहां रहे उतने दिन का दीक्षा का छेद तथा तप का प्रायश्चित आवे ॥ ६ ॥ जिस उपाश्रय

मुहियाणिवा, पिहियाणिवा, कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा वासावास वत्थए ॥ १० ॥ नो कप्पइ निग्गथीण अहे आगमण गिहंसिवा, वियड गिहंसिवा, वसीमूलसिवा, रुक्ख मूलसिवा, अब्भावगासियसिवा वत्थए ॥ ११ ॥ कप्पइ निग्गथाण अहे आगमण गिहंसिवा वसीमुलसिवा रुक्खमूलसिवा, अब्भावगासियसिवा वत्थए ॥ १२ ॥

रेखाकी है मद्दी आदी से मुख मुन्दकी है, वस्त्र दिकर ढके हैं, वो उस मकान में साधु साध्वी को चतुर्मास रहना कल्पता है ॥ १० ॥ साध्वी का मुशाफर खाने में सराय में, चारों तरफ खुल्ला हो एसे मकान में, घास की छाई में, वृक्ष की छांह में, जिसे उल्लंघनकर चल आवे एसी भींतों वाले मकान में, रात रहना नहीं कल्पता है क्योंकि अनार्य पुरुषों से शील भगका भय रहता है॥ ११ ॥साधु को मुशाफरखाने में चारोंतरफ खुल्ला हो ऐसे मकान में, घास की छांह में, वृक्ष की छांह में नहिं चौभींत वाले मकान में रहना कल्पता है क्यों कि साध्वी समान साधु शील रक्षा के लिए परवश्य नहीं हैं ॥ १२ ॥ [जिस मकान का जो धनी हो + उस की आज्ञा लेकर मकान में रहे उस आज्ञा देनवाले का शैय्यान्तर कहा जाता है उस के घर का आहार साधु साध्वी को लेना नहीं कल्पता है कारण कि आहार के दातार तो बहुत हैं परन्तु शैय्या के

+ अथवा मकान के धनीने जिस के सुपरत वह मकान किया हो उस की भी आज्ञा लेकर वहां रहना कल्पता है जैसा साध्वी के सुप्रत गमार पाग करदेवे व तब साधु साध्वी की आज्ञा लेकर बाग में रहते थे

वत्थए ॥ ८ ॥ अहपुण एवं जाणेज्जा नो आसिण्णाइं ४ रासिकडाणिवा पुंजकडाणिवा भित्तिकडाणिवा कुलिय कडाणिवा लंछियाणिवा मुद्दियाणिवा पिहियाणिवा, कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा हेमंतगिम्हासु वत्थए ॥ ९ ॥ अहपुण एवं जाणेज्जा नो रासि कडाइं ४ कोट्ठाउत्ताणिवा पल्लाउत्ताणिवा मंचाउत्ताणिवा, मालाउत्ताणिवा कुंभिउत्ताणिवा करभिउत्ताणिवा ओलित्ताणिवा, विलित्ताणिवा, लंछियाणिवा,

जिस मकान में उक्त प्रकार की वस्तु के बरतन भर के रखे नहीं हैं बरतनों बिखरे हुवे नहीं भी हैं, सर्व स्थान भगरे हुए भी नहीं है वहां पात्र स्थापन कर इधर उधर आवागमन करने का रास्ता है एकांत में ढग लगाकर रखा हुवा है ऊंचा ढग कर रखा है, भींत के पास ढग कर रखा है, कुण्डलाकार ढग कर रखा है, उस पर राख की रेखा की है मृत्तिका की मुद्रा की है, ढक कर रखा है, इस प्रकार रखे हों तो उस स्थान में साधु साध्वी का शीत काल उष्ण काल में रहना कल्पता है ॥ ९ ॥ और भी कोई ऐसा माने ढगला भी नहीं किया, बरतन बिखरे भी नहीं सर्व मकान में भगरे हुवे भी नहीं पास रखने लगा है परंतु कोठे में भरे हैं टोपले में भरे हैं, बांस के पाले (कट) में भरे हैं ऊपर मंचा के मचान पर भरे हैं, कोठी में भरे हैं, घड़े में भरे हैं, गोबर माटी कर उन का मुख-द्वार लिपा है राख प्रमुख की

निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा सागारियपिंडं बहिया अनीहडं असंसट्ठं पडिग्गाहित्तए ॥ १५ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा सागारियपिंडं बहिया नीहडं असंसट्ठं पडिग्गाहित्तए ॥ १६ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा सागारियपिंडं बहिया नीहडं संसट्ठं पडिग्गाहित्तए ॥ १७ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा सागारियपिण्डं बहिया निहडं असंसट्ठं संसट्ठं करेत्तए, जे खलु निग्गंथेवा निग्गंथीवा

आहार निकाला भी नहीं और दूसर का दिया भी नहीं यह आहार शैयांतर का है इस लिये यह भी साधु साध्वी को नहीं कल्पता है, यह दूसरा भांगा ॥१५॥ (३) शैयांतर के घरका आहार शैयांतर के घर के बाहिर निकाला दूसर का देने जाते हैं परन्तु अभीतक दिया नहीं है, दूसरे के आहार के साथ मिलाया नहीं, यह भी आहार साधु साध्वी को नहीं कल्पता है यह तीसर भांगा ॥१६॥ और [४] शैयांतर के घर का आहार शैयांतर के घर के बाहिर निकाला हो दूसर को दे दिया हो, दूसरने अपने आहार में उसे मिला लिया यह आहार पानी को निर्दोष मिले तो साधु साध्वी को ग्रहण करना कल्पता है, क्यों कि यह दूसर का हो गया ॥ १७ ॥ शैयांतर के घर का निपजा आहार शैयांतर के घर के बाहिर निकाला परन्तु दूसरको दिया नहीं दूसरे के आहार में मिलाया नहीं परंतु यह आहार स्वयं साधु साध्वी का बोहराने [देने] के लिये है दूसरे के आहार में मिलाकर साधु साध्वी का देवे तो यह आहार साधु साध्वी को

एग सागारिए पारिहारिए दो तिण्णि चत्तारि पंच सागारिया पारिहारिया एग तत्थ कप्पाग ठवइत्ता अवसेस निव्विसेज्जा ॥ १३ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथी णवा सागारिय पिंड बहिया अनीहडं असंसट्ठं पडिग्गाहित्तए ॥ १४ ॥ नो कप्पइ

दृ शार योद होते हैं और जिस के मकान में उतर उस दा के घर का आहार ग्रहण करेंगे तो साधु को मकान मिलना मुश्किल हो जायगा अन्य स्थान लेआकर वस्तु लाकर भराशीपन लोक भी जाने के यह इन के घर में उतरे हैं ये ही इन का आहार पानी पर भरावस्त करेंगे इत्यादि बहुत दोषों का कारण जान शैय्यातर के घर का आहार पानी ग्रहण करने की साधु साध्वी को मना की है शिष्य प्रश्न करता है कि यदि कोई मकान दो तीन चार पांच जने की मालकी का हो तो किस की आज्ञा लेना और किस का आहार पानी ग्रहण नहीं करना ? अहो शिष्य ! उन पांचों में से एक किसी की आज्ञा ग्रहण करके उसी का शैय्यातर गिनना उस के घर का आहार पानी नहीं लेना, और चारों का आहार पानी ग्रहण करने में कुछ हरकत नहीं है ॥ १३ ॥ [साधु साध्वी को शैय्यातर का घर का आहार पानी कल्पता नहीं है, अनी हर अर्थात् घर में से नहीं निकाला, और असंसट्ठ-दूसर को नहीं दिया इन दोनों शब्द से चौभंगी होती है यह अच्छा २ गुप्त यं स कहते हैं,] (१) शैय्यातर के घर में बनाया हुआ आहार घर के बाहिर निकाला नहीं परंतु दूसरे को देदिया हो उसका मालक तो दूसरा हो गया परंतु शैय्यातर के घर में पड़ा है इस लिए वह साधु साध्वी को लेना नहीं कल्पता है यह प्रथम भांगा ॥ १४ ॥ (२) शैय्यातर के घर से

तम्हा दावए नो से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २१ ॥ सागारियस्स नीहाडिया परेण पडिग्गाहिया तम्हा दावए, एवं से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २२ ॥ सागारियस्स असियाओ अविभत्ताओ अव्वोच्छिन्नाओ अव्वागडाओ अनिज्जूढाओ तम्हा दावए, नो से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २३ ॥ सागारियस्स असियाओ विभत्ताओ

गया परन्तु दूसरे ने ग्रहण नहीं किया वह साधु को देवे तो लेना कल्पे नहीं क्योंकि वह शैयातर काही है यह तीसरा भांगा ॥ ३ ॥ शैयातर के घर से पक्वान्नादि ग्रहण कर दूसरे को दिया वह दूसरने ग्रहण कर लिया वह दूसरा साधु को बहरावे तो साधु को ग्रहण करना कल्पता है क्योंकि वह दूसरे का होगया, यह चौथा भांगा ॥ ४ ॥ एक शैयातर और दूसरा चार जने यों पांचों ही जीमने के लिये एकत्र भोजन तैयार कराया, उस में शैयातर का आहार शामिल है उस में से शैयातर का भाग अलग नहीं किया एकत्र ही सब आहार निकालकर सब शामिल जीमते हैं मांगते हैं, उसमें से शैयातर सिवायकोई दूसरा गृहस्थ साधु को आहार देवता पर आहार साधुको ग्रहण करना नहीं कल्पताहै क्योंकि शैय्यातरका भी शामिलहै ॥ ३॥ शैयातर का आहार शामिल बनाया परंतु तैयार हुवे बाद उस के पांच भाग हिस्से कर शैयातर का हिस्सा शैय्यातर को दे दिया तब दूसरे के आहार के शामिल शैयातर का आहार नहीं रहा तब शैयातर

सागारियं न उद्दिया नीहड असंसट्ठ संसट्ठ करेइ करेतए साइज्जइ से दुहओ वोक्कममाणे आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ १८ ॥ सागारियस्स अनीहिया सागारेण पडिग्गाहित्ता तम्हा दावए नो से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ १९ ॥ सागारियस्स अनीहिया सागारेण अपडिग्गाहित्ता तम्हा दावए एवं से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २० ॥ सागारियस्स नीहडिया परेण अपडिग्गाहित्ता

कल्पता नहीं है आचार्य पीछे गया रके घर के बाहिर निकाला और दूसरे का नहीं दिया हुवा आहार और ग्रहण करने के पात्र के पास पहुंचा दिखाकर दूसरे के आहार के सामिल कराये ममत्व भाव धार करके को अच्छा जाने उसी भाव को और मालिक की दोनोंकी आज्ञाका उल्लंघन करनेवाला होवे उसे प्रायश्चित्त चौमासिक प्राश्चित्त आता है ॥ १८ ॥ अब शय्यांतर आश्रिय चौभंगी कहते हैं कोइ गृहस्थ शैयांतरको पकवानादि बाहिरसे लाकर दे उसको शय्यांतर ग्रहण करके साधु को बहरावे तो वह साधु को ग्रहण करना कल्प नहीं क्यों कि वह आहार शय्यांतर का होगया यह प्रथम भांगा ॥ १९ ॥ कोई पुरुष पकवान प्रमुख बाहिर से शैयांतर का लाकर दे परन्तु शय्यांतरने उसको ग्रहण किया नहीं, इतने में साधु वहां चल आवें और वह गृहस्थ उस पकवान में से साधु को बहरावे तो वह पकवान साधु साध्वी को ग्रहण करना कल्पता है क्योंकि शैयांतरने उसको ग्रहण किया नहीं है यह दूसरा भांगा ॥ २० ॥ शैयांतर के घर से कोइ पकवान ग्रहण कर दूसरे के यहां देन

तम्हा दावए नो से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २१ ॥ सागारियस्स नीहाडिया परेण पडिग्गाहित्ता तम्हा दावए, एवं से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २२ ॥ सागारियस्स असियाओ अविभत्ताओ अव्वोछिन्नाओ अव्वोगडाओ अनिज्जूढाओ तम्हा दावए, नो से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २३ ॥ सागारियस्स असियाओ विभत्ताओ

गया परंतु दूसरे ने ग्रहण नहीं किया वह साधु को देना कल्पे नहीं क्योंकि वह शैयातर का ही है यह तीसरा भांगा ॥ २१ ॥ शैयातर के घर से पक्वान्नादि ग्रहण कर दूसरे को दिया वह दूसरने ग्रहण कर लिया वह दूसरा साधु को बहरावे तो साधु को ग्रहण करना कल्पता है क्योंकि वह दूसरे का होगया, यह चौथा भांगा ॥ २२ ॥ एक शैयातर और दूसरा चार जने यों पांचों ही जीमन के लिये एकत्र भोजन तैयार कराया, उस में शैयातर का आहार शामिल है उस में से शैयातर का भाग अलग नहीं किया परंतु ही सब आहार निकालकर सब शामिल जीमते हैं भागवत है, उसमें से शैयातर सिवायकाई दूसरा गृहस्थ साधु को आहार देता वह आहार साधुको ग्रहण करना नहीं कल्पता है क्योंकि शैयातरका भी शामिल है ॥ २३ ॥ शैयातर का आहार शामिल बनाया परंतु तैयार हुवे बाद उस के पांच भाग हिस्से कर शैयातर का हिस्सा शैयातर को दे दिया तब दूसरे के आहार के शामिल शैयातर का आहार नहीं रहा तब शैयातर

सागारिय ाउ नीहड असमट्ठ समट्ठ कोइ देतेवा साइज्जइ स कप्पइ

न कप्पइ से अ ेज्जइ चउभंगिय परिहारट्ठाण अणुग्घाइय ॥ १८ ॥ सागारियस्स

अ नीहडा सागारेण पडिग्गाहित्ता तम्हा दावए नो से कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ १९ ॥

सागारियस्स आहडिया सागारिएण अपडिग्गाहित्ता तम्हा दावए एव से

कप्पइ पडिग्गाहित्तए ॥ २० ॥ सागारियस्स नीहडिया परेण अपडिग्गाहिय

अर्थ

करना नहीं है आ साधु साध्वी शय्यातर के घर के बाहिर निकाला और दूसरे का नहीं लिया हुवा आहार आ ग्रहण करने को गृहस्थ के पास दू ... दिखाकर दूसरे के आहार के साथ कराव अथवा इस प्रकार करते को अच्छा मान यावत् पिंड की और मालक की दोनोंकी आज्ञा का उल्लघन करनेवाला होवे उसे चौमासिक प्रायश्चित आता है ॥ १८ ॥ अब शय्यातर आश्रित चौभंगी कहते हैं कोइ गृहस्थ शय्यातर को पक्वानादि बाहिर से लाकर देवे उसको शय्यातर ग्रहण करके साधु को बहरावे तो वह साधु को ग्रहण करना कल्प नहीं क्यों कि वह माल शय्यातर का होगया यह प्रथम भांगा ॥ १९ ॥ कोई पुरुष पक्वान मनुष्य बाहिर से शय्यातर का लाकर देवे परन्तु सेयातरने उसको ग्रहण किया नहीं इतने में साधु वहां चल आवें और वह गृहस्थ उस पक्वान में से साधु को बहरावे तो वह पक्वान साधु साध्वी को ग्रहण करना कल्पता है क्योंकि शय्यातरने उसको ग्रहण किया नहीं है यह दूसरा भांगा ॥ २० ॥ शय्यातर के घर से कोई पक्वान्न ग्रहण कर दूसरे के यहां देन

परिहारियएवा तजहा आणिए, ओद्दिए, साणए, वच्चापिच्चिए मुजपिच्चिए, नामे पचमे त्तिवेमि ॥ कप्पे बिइओ उद्देसओ सम्मत्तो ॥ २ ॥ * * * *

परन्तु अपवाद में तीनों प्रकार के वस्त्र काम चलाने पार, ऐसे एकत्रक एक बातकी उत्थापनाकर पीछी उस की आज्ञा भी देदी, जैसे अभिग्रापक पाल मकान में रहना नहीं, यह उत्सर्ग, और अन्य मकान न मिले तो उस मकान में एक दो रात्रि से ज्यादा रहना नहीं यह अपवाद यों दोनों ही मार्ग कहे हैं) ॥ इति बृहत्कल्प का दूसरा उद्देशा ॥ २ ॥ समाप्त ०

परिहारिचएत्रा तजहा ओविणए, ओट्ठिए, साणए, यम्मापिचिए मुजपिचिए, नामे पचमे सिवामि ॥ कप्पे विइओ उद्देसओ सम्मचो ॥ २ ॥ * * * *

परंतु मपवाद में तीनों प्रकार के वस्त्र काम चलाने वार, ऐसे एकवक्त एक बातकी स्त्यापनाकर पीछी उस की आज्ञा भी देदी, जैसे औपद्वीपक पाप मकान में रहना नहीं, यह उत्सर्ग, और अन्य मकान न मिले तो उस मकान में एक दो रात्रि से ज्यादा रहना नहीं यह अपवाद यों दोनों ही मार्ग कहे हैं) ॥ इति बृहत्कल्प का दूसरा उद्देशा ॥ २ ॥ समाप्त ० ० ० ०

निग्गंथीण सलोमाइ चम्माइ धारेत्तए वा परिहरित्तए वा ॥ ३ ॥ कप्पइ निग्गंथाण सलोमाइं चम्माइं धारेत्तए वा परिहरित्तए वा, से वियाइ पडिहारिए, नो चेव णं अपडिहारिए, से वियाइ परिभुत्त नो चेव णं अपरिभुत्ते, से वियाइ एगराइए नो चेव णं अणेगराईए ॥ ४ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा कसिणाइ चम्माइ धारेत्तए वा परिहरित्तए वा

रोम (बाल) है वे ऐसा चर्म रखना साध्वी को कल्पता नहीं है ॥ ३ ॥ परंतु साधु को रोम वाला चर्म रखना भोगवना कल्पता है, वह भी गृहस्थ से पाडीयारा लेना अर्थात् कार्य कर पीछा देवूगा ऐसा कह ग्रहण करना, गृहस्थ पीछा लेने की मना कर तो ग्रहण नहीं करना, वह भी जो चर्म गृहस्थने भोगा हो सो ग्रहण करना जो नहीं भोगा हो तो नहीं ग्रहण करना, वह भी फक्त एक रात्री ही भोगवना कल्पता है परंतु विशेष भोगवना नहीं कल्पता है ॥ (किस वास्ते साधु को क्या काम आता है? गुरु-गुदादि अंग में रक्त पड़ता हो ऐसा रोग हुवा हो वस्त्र से वस्त्र विशेष खराब होते हों तो वस्त्र धोने को इतना पानी मिलना मुश्कल तथा बारम्बार वस्त्र बदल करने वस्त्र भी साधु के पास होने का असम्भव इसलिये चमड़ा लेकर उसपर शयन करे वह भरा जावे तो उसे धोकर साफ करे, इसलिये चमड़ा रखना कल्पता है) ॥ ४ ॥ साधु साध्वी को अखंड चर्म रखना नहीं कल्पता है क्योंकि उसका आकार पशु जैसा होता है अथवा रंगाहुवा सुन्दर आकार वाला चर्म रखना भी नहीं कल्पता है, क्योंकि

॥ तृतीय उद्देशा ॥

नाकप्पइ निग्गंथाणं निग्गंथीणं उवस्सए चिट्ठित्तए निसी- इत्तए तुयट्टित्तए निद्दाइत्तए पयलाइत्तए, आसणंवा पाणंवा खाइमंवा साइमंवा आहारेत्तए, उच्चारंवा पासवणंवा खेलंवा सिंघाणंवा परिट्ठवेत्तए, सज्झायंवा करेत्तए झाणंवा झाइत्तए काउसग्गंवा ठाणंवा ठाइत्तए॥१॥ नाकप्पइ निग्गंथीण निग्गंथाण उवस्सए आसइत्तए जाव ठाइत्तए ॥ २ ॥ ना कप्पइ

जिस उपाश्रयमें साध्वी रहती हो उस उपाश्रयमें साधु को जाना, खडा रहना, बैठना शयनकरना, निद्रा करना, विशेष निद्रा लेना, चार प्रकार के आहार में का किसी भी प्रकार का आहार करना, बडी नीत करना, लघुनीत करना, मुख का श्लेष्म विकार डालना, नाक का मैल डालना, सज्झाय करना, ध्यान करना बैठना, कायुत्सर्ग करना, अथवा भिक्षु की प्रतिमा का धारण करना इतने काम करना कल्पता नहीं है॥१॥ इस ही प्रकार साध्वी को जिस उपाश्रय में साधु रहते हों उस उपाश्रय में खडा रहना बैठना शयन करना यावत् कायुत्सर्ग करना कल्पता नहीं है (उपकार गुण में व्याख्यान सुनने को और सूत्रार्थ ग्रहण करने साध्वी को साधु के उपाश्रय में जाना कल्पता है) ॥२॥ साध्वी का कारन फिर भी जिस चर्म (चमडे) पर

निग्गथीण सलोमाइं चम्माइं धारेत्तए वा परिहरित्तए वा ॥ २ ॥ कप्पइ निग्गथाण सलोमाइं चम्माइं धारेत्तए वा परिहरित्तए वा, से त्रियाइं पडिहारिए, नो चेव णं अपडिहारिए से त्रियाइं परिभुत्त ना चेव णं अपरिभुत्ते, से त्रियाइं एगराइए नो चेव णं अणेगराईए ॥ ४ ॥ नो कप्पइ निग्गथाण वा निग्गथीण वा कसिणाइं चम्माइं धारेत्तए वा परिहरित्तए वा

राम (पास) इसे वैसा चर्म रखना भ गव । कल्पता नहीं है ॥ ३ ॥ परतु साधु को रोम वाला चर्म रखना भोगवना कल्पता है, वह भी गृहस्थ से पाडीयारा लेना अर्थात् कार्य कर पीछा देवूंगा ऐसा कह ग्रहण करना, गृहस्थ पीछा लेने की मनाकर तो ग्रहण नहीं करना, वह भी जो चर्म गृहस्थने भोगा हो तो ग्रहण करना जो नहीं भोगा हो तो नहीं ग्रहण करना, वह भी फक्त एक रात्री ही भोगवना कल्पता है परतु विशेष भोगवना नहीं कल्पता है ॥ (किस वक्त साधु को यह काम आता है? गुरु प्रमुख अंग में रक्त पड़ता हो ऐसा रोग हुवा हो उस से वस्त्र विशेष खराब होते हों तो वस्त्र धोने को इतना पानी मिलना मुश्किल तथा बारम्बार वस्त्र बदलने पर भी साधु के पास होने का असभवित इसलिये चमड़ा लेकर उपर शयन करे वह मरा जावे तो उसे धोकर साफ करे, इसलिये चमड़ा रखना कल्पता है) ॥ ४ ॥ साधु साध्वी को अखंड चर्म रखना नहीं कल्पता है क्योंकि उसका आकार पशू जैसा होता है अथवा रगा हुवा सुन्दर आकार वाला चर्म रखना भी नहीं कल्पता है, क्योंकि

॥ ५ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अकसिणाइ वत्थाइ धारेत्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा कसिणाइ वत्थाइ धारेत्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ७ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अभिन्नाइ वत्थाइ धारेत्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ८ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अभिन्नाइ वत्थाइ धारेत्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ९ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा भिन्नाइ वत्थाइ धारेत्तएवा परिहरित्तएवा ॥ १० ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणं उग्गहणंतगंवा उग्गहणपट्टगंवा धारेत्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ११ ॥ कप्पइ निग्गंथीणं उग्गहणंत

वापरने धोने स रंग उतर स्वराब हो तो पीछा देते गृहस्थ नाराज होवे, तथा गृहस्थ उस को पीछा रंगावे तो आरंभ होवे ॥ ॥ ५ ॥ परंतु विधी से फाडा हुवा आकार सुधारा हुवा तथा रंगादि रहित सादा वस्त्र हो वह साधु साध्वी को रखना कल्पता है ॥६॥ साधु साध्वी को बहुत शोभित रंगादि कर रंगा हुवा वस्त्र रखना नहीं कल्पता है क्योंकि वह ममत्व कारण है ॥ ७ ॥ साधु साध्वी को रंगादि सुंदरता रहित सादा वस्त्र रखना कल्पता ॥ ८ ॥ साधु साध्वी को वस्त्र का अखंड-बिना फाडा हुवा थान रखना नहीं कल्पता है क्योंकि उसकी प्रति ममता हो सकती नहीं है ॥ ९ ॥ परंतु फाडा हुवा वस्त्र रखना कल्पता है ॥१० ॥ साधू को चोलपट्टक की काछ (लांग) मींडना अपवा अंदर जांगीया लंगोट वगैरह बंधना नहीं कल्पता है ॥ ११ ॥ परंतु साध्वी को साडी के अंदर जांगीया लंगोट (बिवार

गंवा ओग्गहणंपट्टगंवा धारित्तएवा परिहरित्तएवा ॥ १२ ॥ निग्गंथीएय गाहावइकुल पिंडवया पडियाए अणुप्पविट्ठाए चेलट्ठे समुप्पज्जेज्जा नो से कप्पइ अप्पणो नीसाए चेल पडिग्गाहेत्तए, कप्पइ से पवत्तिणी नीसाए चेल पडिग्गाहेत्तए ॥ १३ ॥ नो जत्थ पवत्तिणी समाणीसिया, जे तत्थ समाण आयरिएवा उवज्झाएवा पवत्तीवा थेरेवा गणीवा गणहरेवा गणावच्छेइएवा, कप्पइ से त नीसाए चेलं पडिगाहेत्तए ॥ १४ ॥ निग्गंथस्सणं तप्पढमयाए संपव्वयमाणस्स कप्पइ रयहरण पडिग्गह

की एक तथा ऋतु बधादि कारण मलम) रखना कल्पता है ॥ ११ ॥ साध्वी भिक्षा निमित्त गई हो और वहां वस्त्र का अर्थ उत्पन्न होवे अर्थात् गृहस्थ वस्त्र का आमंत्रण करेतो उस वस्त्र को अपनी नेश्राय में अर्थात् मेरा है ऐसे कह कर ग्रहण नहीं करना परंतु जो बडी आर्जिका गुरुणी होवे उन का नेश्राय में ग्रहण करना ॥ १३ ॥ जो कदाचित स्वयं की गुरुणी न होवो उस के आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर, गणी, गणधर, गणावच्छेदक, वगैरे जो बडे हों उन की नेश्राय में वह वस्त्र ग्रहण करना (वह गुरुवादि के आगे आकर रखना, वे गुरुवादि उस को देवे तो उसे ग्रहण करना मोकलना कहते) ॥ १५ ॥ साधु को दीक्षा लेते वक्त—१ रजोहरण, २ (तीन) पात्रे, ३ तीन अखंड स्थान वस्त्र के,

॥ ५ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अकसिणाइ चम्माइ धारित्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा कसिणाइ वत्थाइ धारित्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ७ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अकसिणाइ वत्थाइ धारित्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ८ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा अभिन्नाइ वत्थाइ धारित्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ९ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा भिन्नाइ वत्थाइ धारित्तएवा परिहरित्तएवा ॥ १० ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण उग्गहणंतगंवा उग्गहपट्टगंवा धारित्तएवा परिहरित्तएवा ॥ ११ ॥ कप्पइ निग्गंथीण उग्गहणंत

थापरमें पावे स रंग उपर स्वराब हो सो पीछा देवे गृहस्थ नाराज होवे, तथा गृहस्थ उस को पीछा रंगावे या मारन होवे ॥ ५ ॥ परंतु स्थिर न फाडा हुवा आकार सुधारा हुवा तथा रंगादि रहित सादा वस्त्र हो वह साधु साध्वी को रखना कल्पता है ॥ ६ ॥ साधु साध्वी को बहुत शोभित रंगादि कर रंगा हुवा वस्त्र रखना नहीं कल्पता है क्योंकि यह ममत्व कारण है ॥ ७ ॥ साधु साध्वी को रंगादि सुंदरता रहित फटा वस्त्र रखना कल्पता ॥ ८ ॥ साधु साध्वी को वस्त्र का [illegible]-विना फाडा हुवा थान रखना नहीं कल्पता है क्योंकि उसकी प्रति लेखना हो सकती नहीं है ॥ ९ ॥ परंतु फाडा हुवा वस्त्र रखना कल्पता है ॥ १० ॥ साधु को चोलपट्टक की काछ (लांग) भीडना अथवा अंदर जांगीया लंगोट वगैरह बधना नहीं कल्पता है ॥ ११ ॥ परंतु साध्वी को साडी के अंदर जांगीया लंगोट (विशेष

वत्थेहिं आयाए संपव्वइत्तए, कप्पइ से अहापरिग्गहियाइं वत्थाइं गहाय आयाए संपव्वइत्तए ॥१६॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पढम समोसरणुद्देसपत्ताइ चेलाइ पडिग्गाहित्तए ॥१७॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा दोच्च समोसरणुद्देस पत्ताइ चेलाइ पडिग्गाहेत्तए ॥१८॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा आहाराइणियाए चेलाइं पडिग्गाहेत्तए ॥१९॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा आहाराइणियाए सेज्जासंथारय पडिग्गाहेत्तए

दीक्षा धारण किये कितनेक वर्ष हुए है और जो कोई किसी प्रकार दोष लगने से पुनः दीक्षा लेने योग्य हुआ हो तो उसे दिखादे परन्तु उस के लिये फिर से नये उपकरण मांगने की कुछ जरूर नहीं जूने उपकरण से ही काम चलावे परंतु कोई फूटा तूटा हो तो नये की याचना कर ॥१६॥ साधु साध्वी को प्रथम समोसरण [प्रथम ऋतु का आगम अर्थात् चतुर्मास] में वस्त्र याचना-लेना नहीं कल्पता है॥१७॥ साधु साध्वी को दूसरे समोसरण में अर्थात् कृष्ण काल शीत काल में वस्त्र याचना लेना कल्पता है ॥१८॥ साधु साध्वी को छोटे बड़े की मर्यादा प्रमाने वस्त्र लेना कल्पता है अर्थात् प्रथम आचार्य का फिर उपाध्याय की यों अनुक्रम से यथा उचित वस्त्र धारन करना कल्पता है॥१९॥ साधु साध्वी को छोटे बड़े की मर्यादा प्रमाने शैय्या संथारा लेना कल्पता है (छोटे बड़े की मर्यादा प्रमाने आसन पर बैठना कल्पता है अर्थात् गुरु पाटपर बैठे हो तो शिष्य को बाजोट पर बैठना, गुरु बाजोट पर बैठे हों तो शिष्य को पाटले पर बैठना, गुरु पाटले पर बैठे हो तो शिष्य को जमीनपर आसन बिछाकर बैठना, गुरु

गोच्छगमायाए तिहिय कसिणेहिं वत्थेहिं आयाए संपव्वइत्तए, सेय पुव्वोवट्ठविए सिया एव से नो कप्पइ रयहरण पडिग्गह गोच्छगमायाए तिहिय कसिणेहिं वत्थेहिं आयाए संपव्वइत्तए कप्पइ से अहा परिग्गाहियाइ वत्थाइ गहाय आयाए संपव्वइत्तए ॥ १५ ॥ निग्गंथीएण तप्पढमयाए संपव्वयमाणीए कप्पइ रयहरण पडिग्गह गोच्छगमायाए चउहिय कसिणेहिं वत्थेहिं आयाए संपव्वइत्तए साय पुव्वोवट्ठवियासिया, एव से नो कप्पइ रयहरण पडिग्गह गोच्छगमायाए चउहिय कसिणेहिं

(जिस से साधु के उपकरण सब बनसके) इन को ग्रहण कर दीक्षा ग्रहण करे, फिर सात दिन चार महिने अथवा छ महिने जहां तक छेदोपस्थापनी चारित्र [बडी दीक्षा] नहीं आवे वहां तक १ रजो हरण पात्रा गोच्छा तीन अखंड स्थान वस्त्र के पछाव, परंतु नवे धारन करने नहीं कल्पे और जो कोई किसी अवर दोष लगने से पुनरपी दीक्षा लेने योग्य हुवा होतो उस के लिये नवे उपकरण बनाने की कुछ जरूरत नहीं, जुने हुवे उस ही वापर [फट टूट नवे याचले] ॥ १५ ॥ साध्वी का प्रथम दीक्षा धारन करती वक्त इतनी वस्तुओं ग्रहण करनी कल्पती है तद्यथा—१ रजोहरण, २ पात्रा ३ गोच्छा, च्यार अखंड स्थान वस्त्र के [जिस से साध्वी के सब उपकरण बनसकें] इतने ग्रहण करके दीक्षा धारन करे, बडी दीक्षा ग्रहण कर वहां तक ऊपर कह उपकरणों से ही पछाव. नव उपकरण याचना नहीं कल्पे तथा

वत्थेहिं आयाए सपव्वइत्तए, कप्पइ से अहापरिग्गहियाइ वत्थाइ गहाय आयाए सपव्वइत्तए ॥ १६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पढम समोसरणुद्देसपत्ताइ चेलाइ पडिग्गाहेत्तए ॥ १७ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा दोच्च समोसरणुद्देस पत्ताइ चेलाइं पडिग्गाहेत्तए ॥ १८ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा आहाराइणियाए चेलाइं पडिग्गाहेत्तए ॥ १९ ॥ कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा आहाराइणियाए सेज्जासंथारय पडिग्गाहेत्तए

दीक्षा धारण किये कितनेक वर्ष हुवे है और जो कोई किसी प्रकार दोष लगने से पुनर्वी दीक्षा लेने योग्य हुवे हो वह दिखावे परन्तु उन के लिये फिर से नये उपकरण मांगने की कुछ जरूर नहीं क्यों कि उपकरण सही काम चलावे परंतु कोइ फूटा तूटा होतो नये की याचना करे ॥ १६ ॥ साधु साध्वी को प्रथम समोसरण [प्रथम ऋतु का आगम अर्थात् चतुर्मास] में वस्त्र याचना-लेना नहीं कल्पता है ॥ १७ ॥ साधु साध्वी को दूसरे समोसरण में अर्थात् उष्ण काल शीत काल में वस्त्र याचना लेना कल्पता है ॥ १८ ॥ साधु साध्वी को छोटे बडे की मर्यादा प्रमाने वस्त्र लेना कल्पता है अर्थात् प्रथम आचार्य का फिर उपाध्यायकों या अनुक्रम से यथा उचित वस्त्र धारन करना कल्पता है ॥ १९ ॥ साधु साध्वी का छोटे बडे की मर्यादा प्रमाने शैय्या संथारा लेना कल्पता है (छोटे बडे की मर्यादा प्रमाने आसन पर बैठना कल्पता है अर्थात् गुरु पाटपर बैठे हो तो शिष्य को बाजोट पर बैठना, गुरु बाजोट पर बैठे हों तो शिष्यको पाटले पर बैठना, गुरु पाटले पर बैठे होतो शिष्य को जमीनपर आसन बिछाकर बैठना, गुरु

गोच्छगमायाए तिहिय कसिणेहिं वत्थेहिं आयाए संपव्वइत्तए, सेय पुव्वोवट्ठविए सिया एवं से नो कप्पइ रयहरण पडिग्गह गोच्छगमायाए तिहिय कसिणेहिं वत्थेहिं आयाए संपव्वइत्तए कप्पइ से अहा परिग्गहियाइं वत्थाइं गहाय आयाए संपव्वइत्तए ॥ १५ ॥ निग्गंथीएणं तप्पढमयाए संपव्वयमाणीए कप्पइ रयहरण पडिग्गह गोच्छगमायाए चउहिय कसिणेहिं वत्थेहिं आयाए संपव्वइत्तए साय पुव्वोव-ट्ठवियासिया, एवं से नो कप्पइ रयहरण पडिग्गह गोच्छगमायाए चउहिय कसिणेहिं

(जिस से साधु के उपकरण सब बनसके) इन को ग्रहण कर दीक्षा ग्रहण करे, फिर सात दिन चार महिने अथवा छ महिने जहां तक छेदोपस्थापनी चारित्र [बडी दीक्षा] नहीं आवे वहां तक ये रजो हरण पात्रा गोच्छा तीन अखंड स्थान वस्त्र के सिवाय, परंतु नये धारन करने नहीं कल्पे और जो कोई किसी प्रकार दोष लगने से पुनरपी दीक्षा लेने योग्य हुवा होवे उस के लिये नव उपकरण बनाने की कुछ जरूरत नहीं जुने हुवे उस ही वापर [फट टूट नये धारले] ॥ १६ ॥ साध्वी को प्रथम दीक्षा धारन करती वक्त इतनी वस्तुओं ग्रहण करनी कल्पती है तद्यथा—१ रजोहरन, २ पात्रा ३ गोच्छा, ४ चार अखंड स्थान वस्त्र के [जिस से साध्वी के सब उपकरण बनसकें] इतने ग्रहण करके दीक्षा धारन करे, बडी दीक्षा ग्रहण कर वहां तक ऊपर कहे उपकरणों से ही चलावे, नव उपकरण धारना नहीं कल्पे तथा

से कप्पइ अन्तरागिहासि आसइत्तए वा जाव ठाणं वा ठाइत्तए ॥ २२ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अन्तरागिहासि जाव चउग्गाहं वा पंचगाहं वा आइक्खित्तए वा विभावित्तए वा किट्टित्तए वा पवेइत्तए वा नन्नत्थ एगनाएण वा एगवागरणेण वा, एगगाहं वा, [illegible] ठिच्चा नो चेव णं अट्ठिच्चा ॥ २३ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा [illegible] अन्तरागिहासि इमाइं पंचमहव्वयाइं सभावणाइं आइक्खित्तए वा जाव पवेइत्तए वा, नन्नत्थ एगनाएण वा जाव एगसिलोएण वा सेविय ठिच्चा नो चेव णं अट्ठिच्चा ॥ २४ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा पडिहारिय

हो इस प्रकार का कारण हो तो उन को गृहस्थ के घर में बैठना वगैरह जो ऊपर काम बताये व करना कल्पता है ॥ २२ ॥ साधु साध्वी को गृहस्थ के घर में बैठकर चार अथवा पांच गाथा अलग २ अर्थ विस्तार के साथ कह गृहस्थ को समझाना नहीं कल्पता है परंतु कदाचित् जरूरी कारण पडे तो एकार्थ प्रश्न का उत्तर, अथवा एकार्ध गाथा का अर्थ कर सकते हैं परंतु वह भी खडे २ करना कल्पता है बैठकर नहीं ॥ २३ ॥ साधु साध्वी को गृहस्थ के घर के अंदर बैठकर पांच महाव्रत पच्चीस भावना युक्त अर्थ प्रतिक्रमण करना नहीं कल्पता है परंतु जरूर पडे तो एकार्ध प्रश्न का उत्तर दे सके अथवा एकार्ध गाथा का अर्थ कह सकता है वह भी खडा २ परंतु बैठकर कहना नहीं कल्पता है ॥ २४ ॥ साधु

॥ २० ॥ कप्पइ निग्गंथाणंवा निग्गंथीणंवा आहाराइणियाए किइकम्म करेत्तए ॥ २१ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणंवा निग्गंथीणंवा अंतरागिहंसि आसइत्तएवा, चिट्ठित्तएवा निसीइत्तएवा तुयट्टित्तएवा निद्दाइत्तएवा पयलाइत्तएवा असणंवा पाणंवा खाइमंवा साइमंवा आहार माहरित्तए उच्चारंवा पासवणंवा खेलंवा सिंघाणंवा परिट्ठवेत्तए सज्झायंवा करेत्तए झाणंवा झाइत्तए काउसग्गंवा ठाणंवा ठाइत्तए ॥ अह पुण एवं जाणेज्जा जराजुण्णे वाहिए तवस्सीदुब्बले किलंते मुच्छेज्जवा पवडेज्जवा, एवं

आसन बिछाकर बैठे हातो शिष्य भमी-पर बैठे गुरु भमी पर बैठे होवे शिष्य खडा रहे, गुरु खडे हातो शिष्य हाथ जोड खडा रहे) ॥ २० ॥ साधु साध्वी को बडे बड की रीति मुजब एक दूसर का वंदना करना कल्पता है (परन्तु ऐसा नहीं होना चाहिये कि प्रथम छोटा वंदना करे फिर बडा करे) ॥ २१ ॥ साधु साध्वी को गृहस्थ के घर के अंदर जाना, खडा रहना, बैठना, शयन करना, निद्रा करना, विशेष निद्रा करना, चारों प्रकार के आहार में से आहार करना, दिशा मात्रा करना, खेंकार डालना, सेडा (नाकका मैल) डालना, सज्झाय करना, ध्यानकरना, कायुसग्ग करना, साधुकी प्रतिमाका कायुसग्ग करना इतने काम करना नहीं कल्पता है परन्तु कोइ साधु साध्वी स्थविर हो, रोगी होय, तपस्वी हो, दुर्बल हो इत्यादि कर किलामना पाते हो, मूर्च्छा-मूर्च्छा आजावे, वृद्धावस्थाके कारण से शरीर स्थिर नहीं रहता

सेज्जा संथारयं आयाए अपडिहट्टु संपव्वइत्तए ॥ २५ ॥ नो कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा सागारियसतियं सेज्जा संथारयं आयाए अहिगरण कट्टु संपव्वइत्तए ॥ २६ ॥ कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा पडिहारियंवा सागारियसतियंवा सेज्जा संथारयं आयाए विगरणकट्टु संपव्वइत्तए ॥ २७ ॥ इह खलु निग्गथाणवा निग्गथीणवा पडिहारिएवा सागारिय सतिएवा सेज्जा संथारए परिब्भट्ठ सिया सेय अणुग

साधी पाडिहारिक पराल तृणादि जो गृहस्थ के घर से पाछीयार वापरने को लाये हैं वे पीछे दिये बिना बिन का है उन के सुपरत किया बिना विहार करना नहीं कल्पता है ॥ २८ ॥ साधु साध्वी शैयांतर के पर से पाडिहारिक तृणादि पाछीयार लाये हों और उन में लटमलादि जीवों की उत्पत्ति होगई हो उन जीव सहित पाटपाटलादि गृहस्थ को पीछा देना नहीं कल्पता है ॥ २९ ॥ परन्तु साधु साध्वी का उचित है कि पाछीयारे लाये हुवे पाटपाटले में जो जीवादि उत्पन्न हुवे हैं उन को यत्नासे निकाल कर जिस के होवें उस को देकर फिर विहार करना कल्पता है ॥ २७ ॥ इस प्रकार जिन शासन में रहे साधु साध्वी का पाडिहारा लाया हुवा अथवा शैयांतर के घर का शैया संथारा-पाटपाटला वगैरह के कोई चोर लेजावे तो उस की गवेषणा (शोधन) करना, उस की शोधन करते जो वे मिल जावे तो वे जिस के होवें उसको पीछे देना, और न मिले तो (वे उपकरण जिस धनी के हों उस के पास जाकर कहना कि तुमारी अमुक

सेसियव्वेसिया सेय अणुगवेसमाणे लभेज्जा तस्सेव अणुप्पदायव्वे सिया सेय अणुगवेसमाणे नो लभेज्जा, एवं से कप्पइ दोच्चपि ओग्गह ओगिण्हिता परिहार परिहारित्तए॥ २८ ॥जद्दिवसं च ण समणा निग्गथा सेज्जा संथारयं विप्पजहाति तद्दिवस च ण अवर समणा निग्गथा हव्व मागच्छेज्जा सच्चेव आग्गहस्स पुव्वाणुन्नवणा चिट्ठई अहालंदमवि ओग्गहे ॥ २९ ॥ अत्थियाइथ कइ उवस्सय परियावन्ने अचित्त परिहरणारिहे सच्चेव ओग्गहस्स पुव्वणुन्नवणा चिट्ठइ अहालंदमवि ओग्गहे॥ ३० ॥स वत्थुसु अव्वावडेसु अव्वोगडेसु अपरपारिग्गहिएसु

रकम घोर लेमय हैं मैंने पौकस की परंतु मिले नहीं है) और उन उपकरण को रखाना हो तो अन्य स्थान से दूसरी वक्त याचना कर लावे भोगवे ॥ २८ ॥ कोई साधु घर के मालिक की रजा लेकर एक महिने के लिये रहे हैं उन का बीस दिन पूरे हुवे हो इतने में दूसरे साधु अचानक आजाय, तब प्रथम रहे हुवे साधु अपने लाये हुवे शैया संथारा छोडकर विहार करे तब नव आये साधु को पहिले जो साधु रहे थे उन की आज्ञा ग्रहण कर बाकी रहे (दश) दिन उस स्थानक मे रहे ॥ २९ ॥ और भी जो साधु विहार करके गये हों उन के भूल कर रहे हुवे उपकरणों पीछे से आये हुवे साधु भोगव सकते हैं क्यों कि उन की प्रथम आज्ञा ग्रहण की है, (महिना पूरा हुवे बाद उस स्थानक में रहना नहीं करे जो रहे तो फिर भी गृहस्थ की आज्ञा ग्रहण करना चाहिये) ॥ ३० ॥ किसी गृहस्थ के घर में भूतादि व्यंतर

अमर अपरिग्गहियस्स सचेत अ गगहस्स पुव्वाणुण्णवणा चिट्ठइ अहालंदमवि आगाढ॥२१॥
अत्थुस्स गावइस्स रायगइस्स परपरिग्गहियस्स भिक्खुभावस्सट्ठाए दोच्चपि आगाढ अणुलवे
यव्वसिया ॥ ३२ ॥ स अणरक्कुसुवा अणुमिच्चीसवा अणुचरियासुवा अणुफरिहासुवा
अणपथसया अणुमरासुवा सस्सर आगगहस्स पुव्वाणुन्नवणा चिट्ठइ अहालंदमवि
आगाढ ॥ ३३ ॥ स गामंसिवा जाव सन्निवेसंसिवा बहिया सेण समिविट्ठुवहाए
का वेष मानस उस घर का वह छोड़कर चलागया हो, उस घर की कोई भी संभाल नहीं करता
हो यह घर ह दुआ कोइ भी नहीं करता हो, उस मकान में कोई मिस री भववा
व्यन्तरदेव भी रहता हो उस की आज्ञा मांगकर उस में मर्यादित काल तक रहे ना कल्पता है ॥ ३१ ॥
उस घर की कोई खबर लेनेवाला कोई मालिक कोई भाडे ग्रहण कर तो साधु तीसरे व्रत का स्मरण करने
के लिये जो उस का पालक धन उस की दूसरी वक्त आज्ञा ग्रहणकर उस घर में रहना कल्पता है ॥३२॥
साधु के रहने योग्य मकान नगर के कोट के नजदीक हो, किसी की भीत के पास हो, रास्ते के नजदीक
हो, खाइकी पास में हो, राजपथ के पास हो, किसा के पराडि के पास हो ऐसे मकान में रहने की
इच्छा होवे वह जगह जिस मालकी की हो उन की आज्ञा मांगकर मर्यादित काल प्रमाने वहां रहना
कल्पता है ॥ ३३ ॥ ग्राम यावत् सन्निवेश बाहिर राजा की सेना उतरकर रही है तो साधु साध्वी

कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा तद्दिवसं भिक्खायरियाए गंतूणं पडिनियत्तए,नो से कप्पइ त रयणि तत्थेव उवाइणावेत्तए जे खलु निग्गंथेवा निग्गथीवा तं रयणि तत्थेव उवाइणावेइ उवाइणावेत वा साइज्जइ, से दुहओ वइक्कममाणे आवज्जइ चउमासिय परिहारट्ठाण अणुग्घाइय ॥२४॥ से गामसिवा जाव संनिवेसंसिवा कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा सव्वओ समता सकोस जोयण ओग्गह ओगिण्हिताण परिहार परिहरित्तए ॥ २५ ॥ त्तिबमि ॥ कप्पे तइओ उद्देसो सम्मत्तो ॥ ३ ॥ •

को उस ग्राम मे आहार पानी कर पीछा उस ही दिन तुरंत बाहिर निकलना कल्पता है परंतु साधु साध्वी को वहां रात रहना नहीं कल्पता है, कद चित साधु साध्वी इस जिनाज्ञा का भंगकर वहां रात्रि रहे अथवा दूसरे साधु का रात्री रखावे वे तीर्थंकर का और नगरपति का चोर होते हैं इस लिये उस चौमासिक प्राय श्चित आता है क्योंकि लश्करी कायदा अलग तरह का होता है जो कदाचित हेरू हैं ऐसा समझ कर मारे तो साधु का विटम्बना को इसलिये अवसर देख काम करे ॥ ३४ ॥ ग्रामादि में रहे साधु को उस ग्रामादि के सवा योजन (पांच कोस) के अन्दर की वस्तु भोगवनी कल्पती है वह इस प्रकार रहे हुवे हो उस से दो कोस तक जाकर आहार आदी लावे आधा कोस दिशा जाकर आवे और वहां से ग्राम को विहार का प्रसंग आवे तो वह आहार आदिक साथ लेकर विहारकर दो कोस पर जाकर उसे भोगवे, यों पांच कोस हो जाते हैं ॥ श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि अहो जम्बू ! जैसा मैंने भगवान के पास सुना वैसा तेरे से कहा ॥ इति बृहद्कल्प सूत्र का तीसरा उद्देशा संपात ॥३॥

अणुमत्तं करेमाणे पारंचिए ॥ २ ॥ तओ अणवट्ठप्पा पण्णत्ता तंजहा—साहम्मियाणं तेन्नं करेमाणे, अन्नधम्मियाण तेन्नं करेमाणे, हत्थायालं दलमाणे (पाठान्तर— अत्थादाणं दलमाणे) ॥ ३ ॥ तओ नो कप्पति पव्वावेत्तए तंजहा—पंडए, कीवे, वाइए॥

चिक प्रायश्चित आता है अर्थात् चार अंगुल चौडे कपडे की चिंदी मस्तक पर ललाट पर बांधकर ग्रामोग्राम फिरे कोई पूछे ऐसा क्यों किया ? तो वह अपना दोष प्रगट करे, लोकों में निंदा होवे उस सब पाप सहन करे इस प्रकार बारा महिने फिरावे बाद दूसरी वक्त उसे दीक्षा देकर सामिल लेवे × ॥ २ ॥ तीन प्रकार के काम करनेवाले को नवमा 'अनवस्थाप्य' नामक प्रायश्चित आता है उन के नाम— १ स्वधर्मियों [साधु साध्वी] की परस्पर चोरी करे, २ परधर्मियों की अन्य तीर्थिक की तथा गृहस्थ की चोरी करे, और ३ आपस में मारामार कर प्रहार करे (अथवा अष्टांग निमित्त की प्ररूपना करे) इन तीनों को नवमा 'अनवस्थाप्य' प्रायश्चित आता है उस के पास इस प्रकार का तप करावे कि उस की स्वस्थान से उठने की शक्ति न रहे, उठना हो तब अन्य साधु से कहे अहो मुनी ! मुझे सहारा दो मैं उठना चाहता हूं, इस प्रकार तप कर दुर्बल कर फिर उसे दीक्षा दे सम्प्रदाय सामिल करे ॥ ३ ॥ तीन प्रकार के मनुष्यों को दीक्षा देना नहीं कल्पता है, उन के नाम—१ नपुंसक को, २ रोग शरीरी

× यह नवमा प्रायश्चित इस पंचम काल में देना शास्त्रानुसार देने की कितनेक आचार्यों की मना है.

अक्षमक्ष करेमाणे पारंचिए ॥ २ ॥ तओ अणवट्टप्पा पण्णत्ता तंजहा—साहम्मियाणं तेणं करमाणे, असाहम्मियाणं तेणं करेमाणे, हत्थायालं दलमाणे (पाठान्तर—अत्थादाणं दलमाणे) ॥ ३ ॥ तओ नो कप्पति पव्वावेत्तए तंजहा—पंडए,कीवे,वाइए॥

चित प्रायश्चित्त आता है अर्थात् चार अंगुल चौडी कपडे की चिंदी मस्तक पर-ललाट पर बांधकर ग्रामोग्राम फिरे कोई पूछे ऐसा क्यों किया ! तो वह अपना दोष प्रगट करे, लोकों में निंदा होवे उस सब भाव सहन कर इस प्रकार बारा महिने फिराये बाद दूसरी वक्त उसे दीक्षा देकर शामिल लेवे × ॥ २ ॥ तीन प्रकार के काम करनेवाले को नवरा 'अनवस्थाप्य' नामक प्रायश्चित्त आता है उन के नाम—१ स्वधर्मियों [साधु साध्वी] की परस्पर चोरी करे, २ परधर्मियों की अन्य तीर्थिक की तथा गृहस्थ की चोरी कर, और ३ आपस में मारामार कर लडाइ करे [अथवा अष्टांग निमित्त की प्ररूपना कर] इन तीनों को नववा 'अनवस्थाप्य' प्रायश्चित्त आता है उस के पास इस प्रकार का तप करावे कि उस को स्वस्थान से उठने की शक्ति न रहे, उठना हो तब अन्य साधु से कहे अहो मुनी ! मुझे सारा दो मैं उठना चाहता हूं, इस प्रकार तप कर दुर्बल कर फिर उसे दीक्षा दे सम्प्रदाय सामेल करे ॥ ३ ॥ तीन प्रकार के मनुष्यों को दीक्षा देना नहीं कल्पता है, उन के नाम—१ नपुसक को, २ रोक-दारिद्री

× यह नववा प्रायश्चित्त इस पंचम काल में देश कालानुसार देने की कितनेक आचार्यों की मना है.

अक्रममं करेमाणे पारचिए ॥ २ ॥ तओ अणवट्ठप्पा पण्णत्ता तजहा—साहम्मियाणं, तेणं करमाणे, अन्नधम्मियाण तेणं करेमाणे, हत्थायालं दलमाणे (पाठान्तर— अत्थादाण दलमाणे) ॥ ३ ॥ तओ नो कप्पति पव्वावेत्तए तजहा—पंडए, कीवे, वाइए॥

चिह्न प्रायश्चित्त आता है अर्थात् चार अंगुल चौडे कपडे को स्त्री मस्तक पर सिलाट पर बांधकर ग्रामोग्राम फिरे कोई पूछे ऐसा क्यों किया ? तो वह अपना दोष प्रगट करे, लोकों में निंदा होवे उस सब भाव सहन करे इस प्रकार बारा महीने फिराये बाद दूसरी वक्त उसे दीक्षा देकर शामिल लेव × ॥ २ ॥ तीन प्रकार के काम करनेवाले को नवमा 'अनवस्थाप्य' नामक प्रायश्चित्त आता है उन के नाम—१ स्वधर्मियों [साधु साध्वी] की परस्पर चोरी करे, २ परधर्मियों की अन्य तीर्थिक की तथा गृहस्थ की चोरी कर, और ३ आपस में मारामार कर लडाइ करे [अथवा अष्टांग निमित्त की प्ररूपना कर] इन तीनों को नवमा 'अनवस्थाप्य' प्रायश्चित्त आता है उस के पास इस प्रकार का तप कराये कि उस की स्वस्थान से उठने की शक्ति न रहे, उठना हो तब अन्य साधु से कहे अहो मुनी ! मुझे सारा दो मैं उठना चाहता हूं, इस प्रकार तप कर दुर्बल कर फिर उसे दीक्षा दे सम्प्रदाय सामिल करे ॥ ३ ॥ तीन प्रकार के मनुष्यों को दीक्षा देना नहीं कल्पता है, उन के नाम—१ नपुसक को, २ रोक-दारिद्री

× यह दसवा प्रायश्चित्त इस पंचम काल में देश कालानुसार देने की कितनेक आचार्यों की मना है.

॥ चतुर्थ उद्देशा ॥

तओ अणुग्घाइया पन्नत्ता तंजहा–हत्थ कम्मं करमाणे मेहुणं पडिसेवमाणे राइ भोयणं भुंजमाणे ॥१॥ तओ पारंचिया पण्णत्ता तंजहा–दुट्ठे पारंचिए पमत्ते पारंचिए

अब चौथे उद्देशे की विधि कहते हैं—तीन प्रकार का संयम की घात करे ऐसे कहा है तद्यथा—१ हस्तकर्म करे अर्थात् खोटा प्रयोग बिना अन्य कर्म कर वीर्य का नाश करे, २ देवता मनुष्य तिर्यंच सम्बंधी मैथुन का सेवन करे और ३ रात्रि में भोजन करे इन तीनों काम करने वाले को बड़ा प्रायश्चित्त आता है ॥१॥ तीन प्रकार के काम करने वाले को दसवा पारांचिक प्रायश्चित्त आता है तद्यथा—१ दुष्ट दो प्रकार के होते हैं (१) कषाय दुष्ट और (२) विषय दुष्ट इसमें कषाय दुष्ट के दो भेद एक स्वपक्ष कषाय दुष्ट सो गुरु का घात करे तथा मरे हुवे गुरु के दांतादी अंग का कोप कर भस्म होनाश करे दूसरा परपक्ष कषाय दुष्ट राजा की घात करे और दूसरे विषय दुष्ट के दो भेद—एक तो स्वपक्ष विषय दुष्ट सो साध्वी का शील भंग करे, दूसरा परपक्ष विषय दुष्ट सो राजा की रानी साथ कुशील सेवन करे यह दुष्टता के चार भेद जानना २ प्रमाद प्रमादके दो भेद—(१) मदिरादि शराब का सेवन कर परवश पड़े, (२) थीणद्धी अथवा निद्रा में दिन को चिन्तवन किया काम करे यह पांचवा प्रमादी और ३ परस्पर विषय सेवनकरे अर्थात् पुरुष पुरुष के साथ तथा स्त्री, स्त्री के साथ विषय सेवनकरे इनतीनोंको पार

तंजहा—अदुट्ठे अमूढे अनुग्गाहिए ॥ ८ ॥ निग्गंथिंचणं गिलायमाणिं मायावा भागणीवा धूयावा पलिस्सएज्जा, तंच निग्गंथेसाइज्जेज्जा मेहुण पडिसेवणपत्ते, आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ ९ ॥ निग्गंथंचणं गिलायमाणं पिया

अज्ञान] और ३ कदाग्रही दाधारंगा अर्थात् अपनी पकडी हुई खोटी टेक का भी त्याग नहीं करे वैसे को हितशिक्षण हित करता नहीं होता है ॥ ७ ॥ तीन प्रकार के मनुष्यों को समझाने सुगम, उन के नाम—१ दुष्टता रहित सरल स्वभावी, २ अमूढ गुण अवगुण का पारिखक, गुणग्राही अवगुण परित्यागी और ३ अकदाग्रही दाधारंगा पना रहित, सत्य पक्षी ॥ ८ ॥ किसी साध्वी का शरीर रोगादि के कारण से निर्बल अशक्त होगया है वह साध्वी चढती हुई पाक्तिये चढती उतरती हुई, अथवा घबूतरे आदि पर चढते उतरते चक्कर खाकर गस्त आते व नीचे पडती हो उसे कोइ अन्य साध्वी या गृहस्थनी पकडने वाली न हो और साधु नजीदीक में हो तो उसे मा बेन, पुत्री की बुद्धि, से पकडकर पडती हुइ को रखे उसवक्त जो वह साध्वी उस साधु के हस्त स्पर्श या शरीर स्पर्श की विषय बुद्धिकर अनुमोदना करे अच्छा माने तो उसे चौमासिक प्रायश्चित आता है + । ९ । पिता

+ चौमासिक प्रायश्चित का खुलासा-अणुघाइयं=गुरु चौमासिक प्रायश्चित, जघन्य एक उपवास, मध्यम चार उपवास और उत्कृष्ट एक सौ बीस उपवास अथवा इतने दिनों का दीक्षा की छेद देवे। अर्थात् जैसा पाप रखे वैसा प्रायश्चित

एवं मुडावित्तए सिक्खावित्तए उवट्ठावेत्तए समुंजित्तए संवसित्तए ॥४॥ तओ नो कप्पति वाएत्तए तंजहा—अविणीए विगई पडिबद्धे अविओसवियपाहुडे ॥ ५ ॥ तओ कप्पंति वाएत्तए तंजहा—विणीए नो विगई पडिबद्धे, विओसविय पाहुडे ॥ ६ ॥ तओ दुसन्नप्पा पण्णत्ता तंजहा—दुट्ठे मूढ वुग्गाहिए ॥ ७ ॥ तओ सुसन्नप्पा पण्णत्ता

भिक्षाचारी को बचा भी पहुंचा करता हो उसे और ३ रोगिष्ठ को भी सदैव रोगीष्ट बना रहे अथवा कुष्टादि गलत रोग ग्रसित होवे सो कदापि प्रथम खबर नहीं पडने से भूल से दीक्षा देने में आजावे तो उसका लोच करना नहीं २ साधु का वेष पहराना नहीं, ३ वडी दीक्षा देना नहीं, ४ उस के सामिल आहार करना नहीं और ५ उस के सामिल रहना भी नहीं अयोग्य जान उसे दूर करना ॥ ४ ॥ तीन प्रकार के मनुष्य को सूत्र पढाना नहीं तद्यथा—१ अविनीत को, २ विगय के लोलूपी—गृद्धि को, अथात् दूध दहीं घृत तेल मीठाइ उसे सदैव चाहिये ऐसे को और ३ क्रोधी को जो जरा भी उपसम समझे नहीं, हित शिक्षा धारन करे नहीं इन तीनों को सिद्धान्त पढाना नहीं ॥ ५ ॥ तीन जनों को सिद्धान्त की वाचना देना उन के नाम—१ विनीत को, २ विगय के प्रतिबन्ध रहित—गृद्धता रहित अर्थात् जिस प्रकार के आहार का संयोग मिले उसम ही संतोष माननेवाले को और ३ शांत स्वभावी उपशांत का इन तीनों को सूत्र अवश्य पढाना ॥ ६ ॥ तीन प्रकार के मनुष्य का समझाना मुशकिल, उन के नाम—१ दुष्ट [खराब मनवाला], २ मूढ-[गुण अवगुण का

तंजहा—अदुट्ठे अमूढे अवुग्गाहिए ॥ ८ ॥ निग्गंथिंचणं गिलायमाणिं मायावा भागणीवा धूयावा पलिस्सएज्जा, तंच निग्गंथेसाइज्जेज्जा मेहुण पडिसेवणपत्ते, आव अइ चाउम्मासिय परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ ९ ॥ निग्गंथंचणं गिलायमाणं पिया वा

अज्ञान] और ३ कदाग्रही दाधारगा अर्थात् अपनी पकडी हुई खोटी टेक का भी त्याग नहीं करे ऐसे को हितशिक्षा दिव करता नहीं होता है ॥ ७ ॥ तीन प्रकार के मनुष्यों को समझाने सुगम, उन के नाम—१ दुष्टता रहित सरल स्वभावी २ अमूढ गुण अवगुण का परिक्षक, गुणग्राही अवगुण परित्यागी और ३ अकदाग्रही दाधारंगा पना रहित, सत्य पक्षी ॥ ८ ॥ किसी साध्वी का शरीर रोगादि के कारण से निर्बल अशक्त होगया है वह साध्वी उठती हुई पंक्तिये चढती उतरती हुई, अथवा पगथिये आदि पर चढते उतरते चक्कर खाकर गस्त आवे व नीचे पडती हो उस कोई अन्य साध्वी या गृहस्थनी पकडने वाली न हो और साधु नजीदीक में हो तो उसे मा बेन, वडे की बुद्धि, से पकडकर पडती हुइ को रखे उसवक्त जो वह साध्वी उस साधु के हस्त स्पर्श या शरीर स्पर्श की विषय बुद्धिकर अनुमोदना करे अच्छा जाने तो उसे चौमासिक प्रायश्चित आता है + । ~ प ~ ~

+ चौमासिक प्रायश्चित का खुलासा-अणुग्घाइय=गुरु चौमासिक प्रायश्चित जघन्य एक उपवास, म~म बारे उपवास और उत्कृष्ट एक सो बीस उपवास अथवा इतने दिनोंका दीक्षा का छेद देवे। अर्थात् जैसा पाप वसे वैसा प्रायश्चित

एवं मुंडावित्तए सिक्खावित्तए उवट्ठावित्तए संभुंजित्तए संवसित्तए ॥४॥ तओ नो कप्पंति वाएत्तए तंजहा–अविणीए विगईपडिबद्धे अविओसवियपाहुडे ॥ ५ ॥ तओ कप्पंति वाएत्तए तंजहा–विणीए नो विगईपडिबद्धे विओसवियपाहुडे ॥ ६ ॥ तओ दुसन्नप्पा पण्णत्ता तंजहा–दुट्ठे मूढे वुग्गाहिए ॥ ७ ॥ तओ सुसन्नप्पा पण्णत्ता

मिथ्यात्वी को तथा जो पहुत करता हो उसे और ३ रोगिए का जो सदैव रोगीआ बना रहे अथवा कुराड़े गरम पाम प्रासित हावे जो कदापि संयम स्वर नहीं पहने इन मूल से दीक्षा देने में आगारे या उसका संघ करना नहीं २ साधु का धर्म पढाना नहीं, ३ बड़ी दीक्षा देना नहीं, ४ उस के साथ आहार करना नहीं और ५ उस के सामिल रहना भी नहीं अयोग्य जान उसे दूर करना ॥ ४ ॥ तीन प्रकार के मनुष्य को सूत्र पढाना नहीं तथथा—१ अविनीत को, २ विगय के लोलुपी गृद्धि को, अर्थात् दूध दहीं घृत तेल मीठाइ उसे सदैव चाहिये ऐसे का और ३ क्रोधीको जो जरा भी उपसम सहमक नहीं, हित शिक्षा धारन करे नहीं इन तीनों को सिद्धान्त पढान नहीं ॥ ५ ॥ तीन जनो को सिद्धान्त की वाचना देना उन के नाम—१ विनीत, का, २ विगय के प्रतिबन्ध रहित—गृद्धता रहित अर्थात् जिस प्रकार का आहार का संयोग मिले उसम ही सन्तोष माननेवाले को और ३ शांत स्वभावी उपशांत का इन तीनों का सूत्र सदा पढाना ॥ ६ ॥ तीन प्रकार के मनुष्य का समझाना मुश्किल, उन के नाम—१ दुष्ट [खराब मनवाला], २ मूढ [गुण अवगुण का

उत्ताइण्णाविए सिया त नो अप्पणा भुंजेज्जा नो अन्नसिं अणुप्पदेज्जा एगंते बहुफासुए थंडिले पडिलेहित्ता पमज्जित्ता परिट्ठवेयव्वेसिया त अप्पणा भुंजमाणे अन्नासिंवा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चाउम्मासिय परिहारट्ठाणं उग्घाइयं ॥ ११ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा असणंवा पाणवा खाइमंवा साइमंवा परं अद्ध जोयणमेराए उवाइणावेत्तए सेय आहच्च उवाइणाविए सिया, त नो अप्पणा भुंजेज्जा नो अन्नसिं अणुप्पदेजा एगंते बहुफासुए थंडिल पडिलेहित्ता पमज्जित्ता

भोगवना भी कल्पता नहीं है] कदाचित् भूल से प्रथम पहर का लाया हुवा आहार चौथ प्रहरतक रहगया हो तो उस आहार को आप भी नहीं खावे दूसरे को भी नहीं देवे परन्तु एकान्त में फासुक निर्दोष जगह देखकर पूंजकर उस को परीठा देवे परन्तु वह आहार कर नहीं, इतना चेताने पर भी जो प्रथम प्रहर की ग्रहण की हुई वस्तु को चौथ प्रहर में भोगवेगा अथवा दूसर को खिलावेगा तो उस साधु साध्वी का लघु चौमासिक प्रायश्चित आता है ॥ ११ ॥ साधु साध्वी को ग्राम के बाहिर से दो कोस के उपरांत चार प्रकार का आहार लेजाकर भोगवना कल्पता नहीं है जो कदापि भूल से दो कोस उपरांत आहार लेगया हो तो उस आहार को आप स्वयं खावे नहीं, दूसरे का खिलावे नहीं परंतु बहुत

सायाए पुत्ताए (१८) तं-सायाए भगिणीए धूयाए) पलिस्सएज्जा तंच निग्गंथी साइज्जेज्जा मेहुण पडिसेवणपत्ता आवज्जइ चाउमासियं, परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥१९॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पढमाए पोरसीए पडिग्गाहेत्ता पच्छिमं पोरसिं उवाइणावेत्तए सेय आहच्च

प्रकार से कोई साध्वी रोगादि कारण से अशक्त हुई उठती हुई पतित पतनादि पड़ती लड़खड़ाती हुई। प्रकार मूर्च्छा से भूमि में गिरती हो उस के नजदीक कोई दूसरा साधु आदि सेवा करने वाला न हो और साध्वी नजदीक हो तब उस पिता की भाई की पुत्र की बुद्धि कर ग्रहण करती हुई पकड़ रखे उस स्त्री सम्बन्धी स्पर्श का जो मन में विषय भाव से अनुमोदन कर अच्छा जाने उस साधु को मैथुन सेवन करने का पाप लगे उस का चौमासिक प्रायश्चित्त आवे ॥ १० ॥ साधु साध्वी को प्रथम पोरसी में लाया हुआ अशनादि चारों प्रकार का आहार चौथी पोरसी पर्यंत रखना कल्पता नहीं है [जैसे ही

जैसे दृष्टान्त-किसी पांच गृहस्थोंने किसी साहुकार के वहां रुपे व्याज से रखे एकने १५ दूसरेने ५, तीसरेने ३ चौथेने २ और पांचवेने १ यह पांचों ही चार महिने बाद रुपे व्याज सहित लेने आये तब चारों का व्याज मास २ गिन कर साहुकारने रुपे जिस के जितने थे उस के उतने चुका दिये कमी पूंजीवाले को कमी व्याज से और ज्यादा पूंजीवाले को ज्यादा व्याज से ऐसेही जिस२ साधुका जिस२ प्रकारका पाप जानने में आवे उतना२ प्रायश्चित्त उसे देवे

प्पवेज्जा, पगते बहुफासुए थंडिल पडिलेहिता पमज्जित्ता परिट्ठवेसिया ॥ १३ ॥
जे कडे कप्पट्ठियाण ना स कप्पइ कप्पट्ठियाण, जे कडे कप्पट्ठियाण, कप्पइ से
अकप्पट्ठियाण ज कडे अकप्पट्ठियाण नो से कप्पइ कप्पट्ठियाण जे कड अकप्पट्ठियाण,
कप्पइ स अकप्पट्ठियाण, कप्पट्ठिया विकप्पेट्ठिया कप्पट्ठिया अकप्पेट्ठिया अकप्प

दीक्षित साधु नहीं हाय वो उस आहार का ल एकान्त में जावे फ शुद्ध स्थंडिल भूमि का की पूंजना प्रति
लेखना कर यत्नास परठा देवे ॥ १३ ॥ साधु को आहार ग्रहण करन की चौभंगी कहते हैं—१ साधु
साध्वी के लिये गृहस्थने आहार बनाया है वह प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकर के वारे के किसी भी साधु के
काम में नहीं आता है २ प्रथम तथ अंतिम तीर्थंकर के साधु के लिये आहार बनाया हो वह मध्य के
बावीस तीर्थंकर क वारे क साधु के काम में आजाता है ३ जो आहार बावीस तीर्थंकर के वारे के
साधु क लिये बनाया हो वह आहार प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकर के काम में नहीं आता है और ४ मध्य
के २ तीर्थंकर के वार क साधु के वास्ते आहार बनाया हो वह आहार जिस साधु का उद्देश कर बना
हा उस का वो नहीं खपता है परन्तु अन्य २२ तीर्थंकर के वारे के साधु के वह आहार काम में आजाता
है प्रथम तीर्थंकर के वारे के साधु का दोनों वक्त आवश्यक प्रतिक्रमण करना कल्पता है क्योंकि वे
कल्पस्थित हैं मध्य के २२ तीर्थंकर क साधु ओं जिस वक्त दोष लगता है उस ही वक्त प्रतिक्रमण करलेते हैं

परिट्ठवएज्ज सिया से अप्पणा भुंजमाणे अन्नसिं वा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं उग्घाइयं ॥ १२ ॥ निग्गंथेण य गाहावइकुलं पिंडवाय पडियाए अणुप्पविट्ठेणं अन्नयरे अचित्ते अणेसणिज्जे पाणभोयणे पडिग्गाहिए सिया, अत्थियाइं त्थ केइ सेहतराए अणुवट्ठाविए कप्पइ से तस्स दाउं वा अणुप्पदाउं वा नत्थियाइं त्थ केइ सेहतराए अणुवट्ठाविए से नो अप्पणा भुंजेज्जा नो अन्नसिं अणु

दिये प्रासुक एकांत स्थान में जाकर देखकर पूंजकर उसे परठा देवे इतना बताने पर भी जो कोई साधु साध्वी लोभ उपरांत आहार पानी आदि लेजाकर स्वयं खावे पीवे अथवा दूसरे को खिलावे पिलावे तो उस साधु साध्वी का लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित आता है ॥ १२ ॥ साधु गृहस्थ के घर आहार ग्रहण करने गया उस के घर में निर्दोष आहार है परंतु गृहस्थ के मन में शंका है कि यह आहार साधु को खपता है या नहीं खपता है और यह शंका सहित आहार साधु को दिया अथवा किसी सचित्त वस्तु के संघट्टवाला आहार साधु को दिया अथवा शैयांतर के घर का आहार भूल से भोगवा उक्त प्रकार का दोषित आहार ग्रहण किये बाद साधु को खबर पडे तो वह आहार जो कोई नवी दीक्षित साधु हो (जिस को अभी बडी दीक्षा नहीं दी हो) उस को देवे वह आहार का उस साधु को कल्पता है क्यों कि फिर उस को दूसरी वक्त दीक्षा देना की है कदापि किसी साधु पास ऐसा नवी

एपदेज्जा, एगंते बहुफासुए थंडिले पडिलेहित्ता पमज्जित्ता परिट्ठवेसिया ॥ १२ ॥
जे कडे कप्पट्ठियाण नो से कप्पइ कप्पट्ठियाण, जे कडे कप्पट्ठियाण, कप्पइ से अकप्पट्ठियाण जे कडे अकप्पट्ठियाण नो से कप्पइ कप्पट्ठियाण जे कडे अकप्पट्ठियाण, कप्पइ से अकप्पट्ठियाण, कप्पट्ठिया विकप्पेट्ठिया कप्पट्ठिया अकप्पेट्ठिया अकप्प

दीक्षित साधु नहीं हाय तो उस आहार को एकान्त में जावे फ शुद्ध निर्दोष भूमि को पूजना प्रति लेखना कर परठाय परठा देवे ॥ १२ ॥ साधु को आहार ग्रहण करने की चौभंगी कहते हैं—१ साधु साध्वी के लिये गृहस्थने आहार बनाया है वह प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकर के वारे के किसी भी साधु के काम में नहीं आता है २ प्रथम तथा अंतिम तीर्थंकर के साधु के लिये आहार बनाया हो वह मध्य के बावीस तीर्थंकर के वारे के साधु के काम में आजाता है ३ जो आहार बावीस तीर्थंकर के वारे के साधु के लिये बनाया हो वह आहार प्रथम तथा अन्तिम तीर्थंकर के काम में नहीं आता है और ४ मध्य के २२ तीर्थंकर के वारे के साधु के वास्ते आहार बनाया हो वह आहार जिस साधु का उद्देश कर बना हो उस को तो नहीं कल्पता है परन्तु अन्य २२ तीर्थंकर के वारे के साधु के वह आहार काम में आजाता है प्रथम तीर्थंकर के वारे के साधु को दोनों वक्त आवश्यक प्रतिक्रमण करना कल्पता है क्योंकि वे कल्पास्थित हैं मध्य के २२ तीर्थंकर के साधु को जिस वक्त दोष लगता है उस ही वक्त प्रतिक्रमण करलेते हैं

ट्ठिया ॥ १४ ॥ भिक्खुय गणावच्छेइय इच्छेज्जा अन्नगण उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियवा उवज्झायवा पवत्तिवा थेरवा गणिवा गणहरवा गणावच्छेइयवा अन्नगण उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियवा जाव गणावच्छेइय । अन्नगण उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए तयस वियरात,

क्योंकि व अकल्पनीय है ॥ १४ ॥ कोई साधु साध्वी अपनी सम्प्रदाय को छोडकर अन्य सम्प्रदाय में जाने की इच्छा करता हो तो उस को पूछे बिना जाना कल्पता नहीं है किस को पूछना ? सो कहे अपने गच्छ में आचार्य उपाध्याय, प्रवर्तक स्थविर, गणनायक गणधर, गणावच्छेदक इतने में से जो कोई हाजर हों उन को पूछे बिना नहीं जाना, अन्य गच्छको अंगीकार के विचरना नहीं कल्पे किस प्रकार करना है ? सो कि अपने आचार्यादि को वन्दना नमस्कार करके पूछे कि अहो पूज्य! आपकी इच्छा होवे तो मैं अमुक कार्य के लिए अन्य गच्छ को अंगीकार करके विचरूं ? जो वे आचार्यादि खुशी से आज्ञा देवे तो अन्य गच्छ को अंगीकार कर विचरना कल्पता है और जो वे आचार्यादि आज्ञा नहीं देवें तो उस को अन्य गच्छ अंगीकार कर विचरना नहीं कल्पता है [कोई शंका करेकि अन्य गच्छ में जाने का क्या कारण होता होवे है ? उत्तर-किसी गच्छ में साधुओं भी सुपात्र हैं, गुरु भी उत्तम हैं परंतु सूक्ष्म ज्ञान पाते हुवे थोडे हैं, उस गच्छ में सूक्ष्म ज्ञान की प्राप्ति होने से बडा उपकार का कारन जान उन को सूक्ष्म

एवं से कप्पइ अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, तेयसे नो वियराति, एवं से नो कप्पइ अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए ॥ १५ ॥ गणावच्छेइएय गणावच्छेइयत्तं निक्खिवित्ता अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, नो कप्पइ गणावच्छेइयस्स गणावच्छेइयत्तं अनिक्खिवित्ता अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ गणावच्छेइयस्स गणावच्छेइयत्तं निक्खिवित्ता अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियवा जाव गणावच्छेइयवा अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियवा जाव गणावच्छेइयवा अन्नगण उवसपज्जित्ताण

ज्ञान देने स्वय के गच्छ का छोड अन्य के गच्छ में जावे यों एकान्त निर्जरा का कोई कारन हो उसलिये जावे परंतु क्रोध के वश हो पुजाश्लाघा का अभिलाषी हो, आचार्यादि के पद प्राप्त की इच्छा से इत्यादि कारण से नहीं जावे ॥ यह सूत्र सामान्य साधु साध्वी के लिये कहा ॥ १६ ॥ कोई गणावच्छेदक पद का धारक साधु को स्वय के गच्छ का त्यागकर अन्य के गच्छ में जाने की अभिलाषा हो तो गणावच्छेदक पना छोडे बिना अन्यके गच्छमें जाना नहीं कल्पता है जो उसको अन्य गच्छ में जानाही हो तो वह गणावच्छेदक की पद्वी को छोडकर उक्त प्रकार आचार्य उपाध्यायादि जो बड़े साधु होवे उन को पूछे यादि जो वे आचार्य उपाध्यायादि अन्य गच्छमें जाने की आज्ञा देवे तो जाना कल्पे और जो वे आचार्य उपाध्यायादि आज्ञा नहीं देवे तो जाना नहीं

विहरित्तए ॥ तेय स वियरति एव से कप्पइ अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए तेय से नो वियरति एव से नो कप्पइ अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए ॥१६॥ आयरिय उवज्झाएय गणावच्छेयकम्म इच्छेज्जा अन्नगण उवसंपज्जित्ताए विहरित्तए नो कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्त अनिक्खिवित्ता अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्त निक्खिवित्ता अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए, नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियवा जाव गणावच्छेइयवा अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियवा

(जाने का कारण तो ऊपर के सूत्र में कहा है और नहीं आज्ञा देने का कारण यह है कि उस को अन्य गच्छ में जाने से किसी भी प्रकार का लाभ न होते उस की तथा अन्य की आत्मा का असमाधि तथा गच्छ की अपकीर्ति का कारन जान आज्ञा नहीं भी देवें) ॥१६॥ कदाचित आचार्य उपाध्याय को भी अपना गच्छ छोड अन्य गच्छ में जाने की इच्छा हो, तो उन को भी आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोडे बिना अन्य गच्छ में जाना नहीं कल्पता है परंतु अपनी आचार्य उपाध्याय की पद्वी को उतार कर अपने स्थान अन्य योग्य साधू को आचार्य उपाध्याय के पदे पर स्थापन कर ' दूसरे आचार्य

जाव गणावच्छेयवा अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरिताए, तेय से वियरन्ति एव से कप्पइ अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्ताए तेय से नो वियरति एव से नो कप्पति अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए ॥ १७ ॥ भिक्खूय गणायवकम्म इच्छज्ञा अन्नगण समागपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्ताए, नो से कप्पइ आणापुच्छित्ता आयरियवा उवज्झायवा पवर्तिवा थेरवा गणिवा गणहरवा गणावच्छइयवा अन्नगण समाग पडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियंवा जाव गणावच्छइयवा अन्नगण समोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए

उपाध्याय होमाचें उन को पुछ कि मैं अन्य गच्छ का अंगीकार कर विचरूं? तब, वे नव आचार्य उपाध्याय जो खुशीसे आज्ञा देवेता उस को अन्य गच्छ अंगीकार कर विचारना कल्पता है और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो नया गच्छ अगीकार कर विचरना नहीं कल्पता है ॥ १७ ॥ उक्त तीन सूत्र तो सूत्रज्ञान देने तथा वैयावच्च करने आव उस आश्रियक है अब आहार पानी आश्रिय कहते हैं किसी साधु साध्वी को [जो अन्य गच्छ में जाने से साधु के गुन समाचारी विनयादि गन का लाभ में वृद्धि होने जैसा हो एसा जानकर] अन्य गच्छ में समोग (आहार पानी) सामिल करन की इच्छा

विहरित्तए ॥ नय से वियरंति एवं से कप्पइ अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए नय से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए ॥१६॥ आयरिय उवज्झाए य गणावच्छेइए इच्छेज्जा अन्नगण उवसंपज्जित्ताए विहरित्तए नो से कप्पइ आयरिय उवज्झायत्तं अनिक्खिवित्ता अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्तं निक्खिवित्ता अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा गणावच्छेइयं वा अन्नगण उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियं वा

(जाने का कारण तो ऊपर के सूत्र में कहा है और नहीं आज्ञा देने का कारण यह है कि उस को अन्य गच्छ में जाने से किसी भी प्रकार का लाभ न होवे उस की तथा अन्य की आत्मा का असमाधि होवे तथा गच्छ की अपकीर्ति का कारन जान आज्ञा नहीं भी देवें) ॥१६॥ कदाचित आचार्य उपाध्याय को भी अपना गच्छ छोड अन्य गच्छ में जाने की इच्छा हो, तो उन का भी आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोडे बिना अन्य गच्छ में जाना नहीं कल्पता है परंतु अपनी आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोडकर अपने स्थान अन्य योग्य साधू को आचार्य उपाध्याय के पद पर स्थापन कर दूसरे आचार्य

आव गणावच्छेयवा अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्ताए, तेय से वियरन्ति एव से कप्पइ अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्ताए तेय से नो वियरति एव स नो कप्पति अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्ताए ॥ १७ ॥ भिक्खूय गणायवक्कम्म इच्छज्ञा अन्नगण सभागपढियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्ताए, नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियवा उवज्झायवा पवत्तिंवा थेरवा गणिवा गणहरवा गणावच्छे-इयवा अन्नगण समोग पढियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियवा जाव गणावच्छइयवा अन्नगण समोगपढियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए

उपाध्याय हा आर्य उन को पुछ कि मैं अन्य गच्छ का अंगीकार कर विचरूं ? तब, वे नव आचार्य उपाध्याय जो खुशिसे आज्ञा देवेतो उस को अन्य गच्छ अंगीकार कर विचारना कल्पता है और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो नया गच्छ अंगीकार कर विचरना नहीं कल्पता है ॥ १७ ॥ उक्त तीन सूत्र तो सुभज्ञान क्षेने तथा वैयावच करने जाने उस आश्रियक है अब आहार पानी आश्रिय कहते हैं किसी साधु साध्वी को [जो अन्य गच्छ में जाने से साधु के गुन समाचारी विनयादि गन का लाभ में वृद्धि होने जैसा हो एसा जानकर] अन्य गच्छ में समोग (आहार पानी) सामिल करने की इच्छा

विहरित्तए ॥ नय से वियरंति एवं से कप्पइ अन्नगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए नय से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥१६॥ आयरिय उवज्झाए गणावच्छेइए इच्छेज्जा अन्नगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए नो से कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्तं अनिक्खिवित्ता अन्नगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्तं निक्खिवित्ता अन्नगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेइयं वा अन्नगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियं वा

(जाने के कारण तो ऊपर के सूत्र में कहा है और नहीं आज्ञा देने का कारण यह है कि उस को अन्य गच्छ में जाने से किसी भी प्रकार का लाभ न होवे उस की तथा अन्य की आत्मा का अलाभ देख तथा गच्छ की अपकीर्ति का कारन जान आज्ञा नहीं भी देवें) ॥१६॥ कदाचित आचार्य उपाध्याय को भी अपना गच्छ छोड अन्य गच्छ में जाने की इच्छा हो, तो उन को भी आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोडे विना अन्य गच्छ में जाना नहीं कल्पता है परंतु अपनी आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोडकर अपने स्थान अन्य योग्य साधू को आचार्य उपाध्याय के पदे पर स्थापन कर' दूसरे आचार्य

जाव गणावच्छेयवा अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, तेय से वियरन्ति एव से कप्पइ अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए तेय से नो वियरति एव स नो कप्पति अन्नगण उवसपज्जित्ताण विहरित्तए ॥ १७ ॥ भिक्खूय गणायवक्कम्म इच्छज्ज। अन्नगण सभागपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, नो से कप्पइ आणापुच्छित्ता आयरियवा उवज्झायवा पवत्तिवा थेरवा गणिवा गणहरवा गणावच्छेइयवा अन्नगण सभोग पडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियंवा जाव गणावच्छेइयवा अन्नगण सभोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए

उपाध्याय हाभार्दे उन को पुछ कि मैं अन्य गच्छ का अंगीकार कर विचरूं ? तब, वे जब आचार्य उपाध्याय जो स्वशिसे आज्ञा देवे। उस को अन्य गच्छ अंगीकार कर विचारना कल्पता है और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो नया गच्छ अगीकार कर विचरना नहीं कल्पता है ॥ १७ ॥ उक्त तीन सूत्र तो सूत्रज्ञान देने तथा वैयावच करने आन उस आश्रियक है अब आहार पानी आश्रिय कहते हैं किसी साधु साध्वी को [जो अन्य गच्छ में ज्ञान से साधु के गुन समाचारी विनयादि गुन का लाभ में वृद्धि होने जैसा हो एसा जानकर] अन्य गच्छ में समाग (आहार पानी) सामिल करने की इच्छा

तेय से वियरंति एवं से कप्पइ अन्नगण संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, तेय से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थु त्तरियं धम्मविणयं लभेज्जा एवं से कप्पइ अन्नगणं संभोग पडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्मविणयं नो लभेज्जा एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोग पडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ १८ ॥ गणावच्छेइए य गणाओ अवक्कम्म इच्छेज्जा अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, नो कप्पइ गणावच्छेइयस्स गणावच्छेइयत्तं अनिक्खिवित्ता अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए कप्पइ गणावच्छेइयस्स गणावच्छेइयत्तं निक्खिवित्ता अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेइयं वा

[illegible] उपाध्याय है उन को पूछ उन की आज्ञा यदि वे आज्ञा देवे तो अन्य गच्छ में जाकर संभोग करना आहार पानी सामिल करना कल्पता है और जो वे आचार्यादि आज्ञा नहीं देवे तो उन को जाना नहीं कल्पता है (क्लेश करके जाना नहीं) ॥ १८ ॥ गणावच्छेदक अपने गच्छ को छोडकर अन्य गच्छ में आहार पानी सामिल करने को जाने की इच्छा हो तो जाव [illegible]

अन्नगण संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए, कप्पइ से अपुच्छित्ता आयरियवा जाव गणावच्छेइयंवा अन्नगण संभोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए तेय से वियरंति एव स कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, तेय से नो वियरंति एव से नो कप्पइ अन्नगण संभोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए जत्युत्तरिय धम्म विणय लभेज्जा, एव से कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए जत्थुत्तरिय धम्म विणय नो लभेज्जा एव से नो कप्पइ अन्नगण संभोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए ॥ १९ ॥ आयरिय उवज्झाए गणावच्छेकम इच्छेज्जा अन्नगण संभोगपडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, नो कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्त अनिक्खिवित्ता अन्नगण संभोग

लिये जावे। या कि अन्य गच्छ में जाने से साधु धर्म समाचारी विनयादि गुन की वृद्धि होगी इत्यादि लाभ का कारन जाने तो जावे जाने क लिय अपने आचार्यादि को पूछ जो वे खुशी से आज्ञा देवे तो जाना कल्प, और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो आहार पानी सामिल करने जाना नहीं कल्पे ॥ १९ ॥ आचार्य उपाध्याय को अपना गच्छ छोडकर अन्य गच्छ के सामिल आहार पानी करने की इच्छा हो

अन्नगण संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेययं वा अन्नंगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए तेय से वियरंति एवं से कप्पइ अन्नंगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, तेय से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्म विणयं लभेज्जा, एवं से कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्म विणयं नो लभेज्जा एवं से नो कप्पइ अन्नंगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ १९ ॥ आयरिय उवज्झाए गणावच्छेयस्स इच्छेज्जा अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, नो कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्तं अनिक्खिवित्ता अन्नगणं संभोग

लिये जावे ? या कि अन्य गच्छ में जाने से साधु धर्म समाचारी विनयादि गुन की वृद्धि होगी इत्यादि काम का कारन जाने तो जाय जाने के लिये अपने आचार्यादि को पूछ जो वे खुशी से आज्ञा देवे तो जाना कल्पे, और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो आहार पानी सामिल करने जाना नहीं कल्पे ॥ १९ ॥ आचार्य उपाध्याय को अपना गच्छ छोड़कर अन्य गच्छ के सामिल आहार पानी करने की इच्छा हो

तए से विपरीत एवं से कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ते य से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्मविणयं लभेज्जा एवं से कप्पइ अन्नगणं संभोग पडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्मविणयं नो लभेज्जा एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोग पडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ १८ ॥ गणावच्छेयए य गणाओ अवक्कम्म इच्छेज्जा अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, नो कप्पइ गणावच्छेयस्स गणावच्छेइयत्तं अनिक्खिवित्ता अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए कप्पइ गणावच्छेइयस्स गणावच्छेइयत्तं निक्खिवित्ता अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेइयं वा

...ाले जावे परन्तु आचार्य उपाध्याय है उन पूछ उन की आज्ञा मांगे जो वे ज्ञान की आज्ञा देवे तो अन्य गच्छ में जाकर संभोग करना आहार पानी सामिल करना कल्पता है और जो वे आचार्यादि आज्ञा नहीं देवे तो उन को जाना नहीं कल्पता है (छिद्र करके जाना नहीं) ॥ १८ ॥ गणावच्छेदक अपने गच्छ का छोड़कर अन्य गच्छ में आहार पानी सामिल करने को जाने की इच्छा हो तो जावे किंत

अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, कप्पइ से अणुपुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेययं वा अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, तेय से वियरंति एवं से कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, तेय से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्म विणयं लभेज्जा, एवं से कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्म विणयं नो लभेज्जा एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ॥ १९ ॥ आयरिय उवज्झाए गणावच्छेयए इच्छेज्जा अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, नो कप्पइ आयरिय उवज्झायत्तं आयरिय उवज्झाए अनिक्खिवित्ता अन्नगणं संभोग

लिये जावे ? या कि अन्य गच्छ में जाने से साधु धर्म की समाचारी विनयादि गुन की वृद्धि होगी इत्यादि काम का कारन जाने तो जाय जाने के लिए अपने आचार्यादि को पूछे जो वे खुशी से आज्ञा देवे तो जाना कल्पै, और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो आहार पानी सामिल करने जाना नहीं कल्पे ॥ १९ ॥ आचार्य उपाध्याय को अपना गच्छ छोडकर अन्य गच्छ के सामिल आहार पानी करने की इच्छा हो

इच्छेज्जा अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियवा जाव गणावच्छेइयवा अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए कप्पइ से आपुच्छिता आयरियवा जाव गणावच्छेइयवा अन्न आयरिए उवज्झाय उद्दिसा वेत्त ; तेयसे वियरति एव से कप्पइ अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, तेयसे नो वियरति, एवं से नो कप्पइ अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, नो से कप्पइ तेसिं कारण अदीवेता अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, कप्पइ से तेसिं कारणं दीवेत्ता

गच्छ में आचार्य मृत्यु पाये हैं उस गच्छ में किसी उत्तम कुलोत्पन्न विद्वानने दीक्षा धारन की है परंतु वह नवी दीक्षित है उस को आचार्य पद्वी के योग्य जानकर छोटी अवस्थासे और नवी दीक्षित को भी आचार्य पद पर स्थापन करे [विहार सूत्र की साक्षी से] फिर उन तुर्त के हुवे आचार्य को कोई स्थविर साधु सूत्र अभ्यास करावे (जिस प्रकार बालक राजा को प्रधान न्याय सिखाता हो) इतने में वे स्थविर पढानेवाले भी मृत्यु को प्राप्त हुवे हो तब अन्य गच्छ में रहे पवित्र बहुसूत्री साधु हों उन को योग्य है कि बालाचार्याचार्य को पढ़ने के लिये उन के पास जावे क्यों कि उन में साधुओं का सम्प्रदाय अच्छा है उन को ज्ञान देने से जैन धर्म का ईश्वम चिरस्थायी बने इस लिये स्नमुख जाकर उन साधु को अभ्यास करावे (यहां इस ही कारण से यह अर्थ ग्रहण किया जाता है तत्त्व बहुसूत्री गम्य) उक्त कारणसे साधु साध्वी अन्य गच्छ के आचार्य उपाध्याय को सूत्र ज्ञान देने का जाने की इच्छा करे उन को योग्य है कि वे अपने गच्छ के आचार्य उपाध्यायको पूछे, जो वे आज्ञा दे तो अन्य गच्छ के आचार्य देश

[illegible] आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्त [illegible] विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छि[illegible] [illegible] अन्नगणं समागपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए कप्पइ से [illegible] आयरियउवज्झायं [illegible] गणावच्छेइयं वा अन्नगणं समागपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ते य से वियरंति एवं से कप्पइ अन्नगणं समागपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ते य से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नगणं समागपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्मविणयं लभेज्जा एवं से कप्पइ अन्नगणं समागपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए जत्थुत्तरियं धम्मविणयं नो लभेज्जा एवं से नो कप्पइ अन्नगणं संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए॥२०॥ भिक्षुक

कि जिस स साधु तप सदाचारी विनयादि गुन के ज्ञान में वृद्धि होवे सा योग्य है उन को की वे आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोड अपनी पद्वी पर अन्य योग्य आचार्य उपाध्याय स्थापन कर उन की आज्ञा लेवे, जो वे आज्ञा देवे तो अन्य गच्छ से संभोग (आहार सामिल) करे और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो संभोग करने जाना नहीं कल्पे ॥ २० ॥ अब सूत्र पतन आश्रिय आप धर्म का कहते हैं किसी

पडियाए उवसपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ आयरिय उवज्झायस्स आयरिय उवज्झायत्त निक्खिवित्ता अन्नगण संभोग पडियाए उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छि त्ता आयरियंवा जाव गणावच्छेइयंवा अन्नगण संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियंवा जाव गणावच्छेइयंवा अन्नगण संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए तेयसे वियरति एव से कप्पइ अन्नगण संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए, तेयसे नो वियरति एव से नो कप्पइ अन्नगण संभोग उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए, जत्थुत्तरिय धम्मविणय लभेज्जा एव से कप्पइ अन्नगण संभोग पडियाए उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए, जत्थुत्तरिय धम्मविणय नो लभेज्जा एव से नो कप्पइ अन्नगण संभोगपडियाए उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए॥ २०॥ भिक्खूय

कि जिस से साधु एव समाचारी विनयादि गुन के ज्ञान में वृद्धि होवे सो योग्य है उन को भी वे आचार्य उपाध्याय की पद्वी को छोड अपनी पद्वी पर अन्य योग्य आचार्य उपाध्याय स्थापन कर उन की आज्ञा लेवे, जो वे आज्ञा देवे तो अन्य गच्छ से संभोग (आहार सामिल) करे और जो वे आज्ञा नहीं देवे तो संभोग करने जाना नहीं कल्पे ॥ २० ॥ अब सूत्र पठन आश्रिय आप बस का कहते हैं किसी

इच्छेजा अन्न आयरिय उवज्झायं उद्दिसावेत्तए, नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आय रियंवा जाव गणावच्छेइयंवा अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए कप्पइ से आपु च्छित्ता आयरियंवा जाव गणावच्छेइयंवा अन्नं आयरिए उवज्झाय उद्दिसा वेत्त ए तियसे वियरति एव से कप्पइ अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए,तेयस नो वियरति, एव से नो कप्पइ अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, नो से कप्पइ तेसिं कारणं अदीवेता अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, कप्पइ से तेसिं कारणं दीवेत्ता

गच्छ में आचार्य मृत्यु पावे हैं उस गच्छ में किसी उत्तम कुलास्पन्न विद्वानने दीक्षा धारन की है परंतु वह नवी दीक्षित है उस को आचार्य पद्वी के योग्य जानकर छोटी वयवाले और नवी दीक्षित का भी आचार्य पद पर स्थापन करे [स्थविर सूत्र की साक्षी से] फिर उन गुर्व के हुवे आचार्य को कोई स्थविर साधु सूत्र अभ्यास करावे है (जिस प्रकार बालक राजा को प्रधान न्याय सिखाता हो) इतने में वे स्थविर पढानेवाले भी मृत्यु को प्राप्त हुवे हो तब अन्य गच्छ में रहे परिष बहुसूत्री साधु हों उन को योग्य है कि बालआचार्य को पढाने के लिये उन के पास जावे क्यों कि उन में साधुओं का सम्प्रदाय अच्छा है उन को ज्ञान देने से जैन धर्म का स्थंभ चिरस्थायी बने इस लिये सन्मुख आकर उन साध का अभ्यास करावे (यहां इस ही कारण स यह अर्थ ग्रहण किया जाता जाता है तरुण बहुसूत्री-गम्य) उक्त कारणसे साधु साध्वी अन्य गच्छ के आचार्य उपाध्याय को सूत्र ज्ञान देने का जाने की इच्छा करे उन को योग्य है कि वे अपने गच्छ के आचार्य उपाध्यायको पूछे, जो वे आज्ञा दे तो अन्य गच्छ के आचार्य देवा

अन्न आयरिय उवज्झायं उद्दिसावेत्तए ॥ २१ ॥ गणावच्छेइए य इच्छेज्जा अन्नं आयरिय उवज्झायं उद्दिसावेत्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं जाव गणावच्छेइयं वा अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियं जाव गणावच्छेइयं वा अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, ते य से वियरंति, एवं से कप्पइ अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, ते य से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नं आयरिय उवज्झायं उद्दिसावेत्तए नो से कप्पइ तेसिं कारणं अदीवित्ता अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, कप्पइ से तेसिं कारणं दीवित्ता अन्न आयरिय उवज्झायं उद्दिसावेत्तए ॥ २२ ॥ आयरिय उवज्झाए य इच्छेज्जा अन्न आयरियं

ध्याय का मूल पढाने जाय और जो आज्ञा नहीं देवे तो नहीं जावे (जो जाने पहिले पढाने जाने का कारण बतावे तो जाना होवे) ॥ २१ ॥ गणावच्छेदक अपने गच्छ में से निकलकर अन्य गच्छ के आचार्य उपाध्याय को मूल ज्ञान देने की इच्छा करे तो उन को कल्पता है कि व अपने गच्छ के आचार्य उपाध्याय को पूछे बिना नहीं जावे जो आचार्य उपाध्याय आज्ञा दे तो जाना कल्पे और आज्ञा नहीं दे तो जाना नहीं कल्पे कारण बताये बिना जाय नहीं ॥ २२ ॥ आचार्य उपाध्याय जो अन्य गच्छ के

उवज्झायं उद्दिसावेत्तए ना से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयारियंवा जाव गणावच्छेइयंवा अन्नं आयरिय,उवज्झायं उद्दिसेवेत्तए, कप्पइ स आपुच्छित्ता आयरियंवा जाव गण घच्छेइयंवा अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए तेय से वियरति एव से कप्पइ अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए, तेयसा नो वियरति एव स नो कप्पइ अन्नं आयरियं उवज्झाय उद्दिसावेत्तए ना से कप्पइ तेसिं कारण अदीवेता अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए,कप्पइ से तासिं कारण दीवेत्ता अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावेत्तए ॥ २३ ॥ भिक्खूय राओवा वियालवा आहच्च विसुंभेज्जा, तच सरीरग वेयावच्चकरा इच्छेज्जा एगते बहुफासुए थंडिले परिट्ठावेत्तए, अत्थियाई य केइ

आचार्य उपाध्याय को मूत्राभ्यास कराने का आना पराात होवे तो अपने स्थान नवे आचार्य उपाध्याय की स्थापना कर उन को पूछे बिना जाना कल्पे नहीं, जो वे आज्ञा देवे तो जावे,नहीं देवे तो नहीं जाय परंतु कारण बतावे ॥ २३ ॥ साधु साध्वी विहार करते किसी ग्रामादि में आये [वहां श्रावक की वस्तीन हो] और वहां अकस्मात् कोइ साधु मृत्यु पाया हो तो उस मृत्युक साधु की अन्य योग्य साधु को वैयावच करना योग्य है अर्थात् उस सब (कलेवर) को किसी प्रकार बाधा नहो इस प्रकार यत्ना से रखे [illegible] काल में किसी गृहस्थ के यहां से पाडीयारे काष्ठादि याचकर लावे उस साधु के शव को एकान्त स्थान में ड्

अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावित्तए ॥ २१ ॥ गणावच्छेइए य इच्छेज्जा अन्न आयरिय उवज्झायं उद्दिसावित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियत्ता जाव गणावच्छेइयत्ता अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावित्तए कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियत्ता जाव गणावच्छेइयत्ता अन्न आयरिय उवज्झाय उद्दिसावित्तए, ते य से वियरंति, एवं से कप्पइ अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावित्तए ते य से नो वियरंति एवं से नो कप्पइ अन्नं आयरिय उवज्झायं उद्दिसावित्तए नो से कप्पइ तेसिं कारण अदीवित्ता अन्नं आयरिय उवज्झाय उद्दिसावित्तए कप्पइ से तेसिं कारण दीवित्ता अन्नं आयरिय उवज्झायं उद्दिसावित्तए ॥ २२ ॥ आयरिय उवज्झाए य इच्छेज्जा अन्न आयरियं

ध्याय का मूल पढाने जाय और जो आज्ञा नहीं देवे तो नहीं जावे (जो जाने पहिले पढाने जाने का कारण बतावे तो जाना होवे) ॥ २१ ॥ गणावच्छेदक अपने गच्छ में से निकलकर अन्य गच्छ के आचार्य उपाध्याय को मूल ज्ञान देने की इच्छा करे तो उन को कल्पता है कि अपने गच्छ के आचार्य उपाध्याय को पूछे बिना नहीं जावे जो आचार्य उपाध्याय आज्ञा दे तो जाना कल्पे और आज्ञा नहीं दे तो जाना नहीं कल्पे कारण बताये बिना जाना नहीं ॥ २२ ॥ आचार्य उपाध्याय जो अन्य गच्छ के

पट्ठविए आहयव्वे सिया सेय सुएण नो पट्ठविए नो आइयव्वे सिया, सेय सुएण पट्ठवि-ज्जमाणे नो आइयइ, से निज्जूहियव्वे सिया ॥२५॥ परिहार कप्पट्ठियस्सण भिक्खुस्स कप्पइ तद्दिवसं एग गिहंसि पिंडवाय दवावत्तए तेणपरं ना से कप्पइ असणंवा पाणंवा खाइमंवा साइमंवा दाउंवा अणुप्प दाउंवा, कप्पइ से अन्नयर वेयावडियं करत्तए तंजहा उट्ठाणंवा, अणुट्ठावणंवा, निसीयवणंवा, तुयट्ठाणंवा, उच्चार पासवण खेलजल सिंघाण विगिंचणंवा विसोहणंवा करेत्तए अहपुण एवं जाणेज्जा छिन्नावाएसु

दवे ता उसे अंगीकार नहीं करे और सूत्र नुसार प्रायश्चित दते जो अंगीकार न करे तो उसको गच्छ सम्प्रदायसे बाहिर निकाल देना ॥ २५ ॥ किसी साधुने परिहारविशुद्ध चारित्र अंगीकार किया हो उस को उस चारित्र की विधी बताने के वास्ते पारणे के दिन एक दिन गृहस्थ के घर साधु जाकर आहारदिलावेना करसता है उस दिन उपरांत उनको चारों प्रकार का आहार दिलाना नहीं कल्पे अर्थात् वारम्वार दिलाना नहीं कल्पे,वैसे ही स्थानमें रहकर अन्यके पास उसकी वैयावच करना कल्पे अथात् परिहार विशुद्ध चारित्र की आराधना किस प्रकार करना उस की विधी बताना भी कल्पे यथा खडे रहकर कायुत्सर्ग करना, क्रिया करना, परना से इस प्रकार बैठना शयन करना, पडीलेहण दिशा लघुनी मात्रा मुख का खेंकार नाक का श्लेष्म पोंछना, उचारादि से शरीर अशुद्ध हुवा होतो वह मलमूत्र दूर करना।

सागारियसंतिए उवगरणजाए अविचे परिहरणारिहे कप्पइ से सागारकडं गहाय स सरीरग पगन्ते बहुफासुए थंडिल परिट्ठवेत्ता तत्थेव उवनिक्खवियव्वेसिया ॥ २४ ॥ भिक्खुय अहिगरण कट्टु त अहिगरण अविओसवेत्ता नो से कप्पइ गाहावइ कुलं भत्ताएवा पाणाएवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा, नो से कप्पइ बहिया वियारभूमिवा विहारभूमिवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा, नो से कप्पइ गामाणुगाम दूइज्जित्तए,जत्थेव अप्पणो आयरिय उवज्झाय पासेज्जा बहुस्सुय बब्भागम कप्पइ से तस्संतिए आलोएत्तए पडिक्कमित्तए निंदित्तए गरहित्तए विउट्टित्तए विसोहित्तए अकरणाए अब्भुट्ठित्तए आहारिहं पायच्छित्तं पडिवज्जित्तए, सेय सुएणं

काम को शीघ्र जंगल में एकान्त फासूक निर्दोष भगह में धराकर परिठावे पीछा भाकर जिस का वास हो उसे वास पीछा देकर (चार लोगस का कायुत्सर्ग करे) ॥ २४ ॥ किसी साधु साध्वी के आपस में कलह हुवा हो तो उन को क्षमाकर शांत किये बिना उन साधु साध्वी का गृहस्थ के घर आहार पानी लेने जाना कल्पे नहीं, स्वाध्याय करना, जंगल [दिशा] जाना भी कल्पे नहीं एक ग्राम से दूसरे ग्राम विहार करना भी कल्पे नहीं (मौन से रहना भी कल्पे नहीं) तो फिर क्या करना कल्पे ? सो कि—जहां अपने आचार्य उपाध्याय होवे वहां जाकर अपना जो अपराध हो वह प्रगट कर आचार्य उपाध्याय जो प्रायश्चित (सूत्रानुसार) देवे उसे अंगीकार करे, जो यत्नादि कारण से सूत्रानुसार प्रायश्चित्त नहीं

पट्ठविए आइयव्वे सिया सेय सुएण नो पट्ठविए नो आइयव्वे सिया, सेय सुएण पट्ठवि-ज्जमाणे नो आइयइ, से निज्जूहियव्वे सिया ॥२५॥ परिहार कप्पट्ठियस्सण भिक्खुस्स कप्पइ तद्दिवसं एग गिहंसि पिंडवाय दवावित्तए तेणपर ना से कप्पइ असणंवा पाणवा खाइमंवा साइमंवा दाउंवा अणुप्प दाउंवा, कप्पइ से अन्नयर वेयावडिय करत्ताए तंजहा-उट्ठाणवा, अणुट्ठाणवा, निसीयणंवा, तुयट्ठाणवा, उच्चार पासवण खेलजल सिंघाण विगिंचणवा विसोहणवा करेत्तए अहपुण एवं जाणेज्जा छिन्नावाएसु

इवे ता उसे अंगीकार नहीं करे और सूत्र नुसार प्रायश्चित देवे सो अंगीकार न करे तो उसको गच्छ सम्प्रदाय से बाहिर निकल देना ॥ २५ ॥ किसी साधुने परिहारविशुद्ध चारित्र अंगीकार किया हो उस को उस चारित्र की विधी बताने के वास्ते पारणे के दिन एक दिन गृहस्थ के घर साधु जाकर आहारादि लाके देना कल्पता है उस दिन उपरांत उनको चारों प्रकार का आहार दिलाना नहीं कल्पे अर्थात् वारम्बार दिलाना नहीं कल्पे, वैसे ही स्थानमें रहकर अन्य के पास उसकी वैयावच करना कल्पे अर्थात् परिहार विशुद्ध चारित्र की आराधना किस प्रकार करना उस की विधी बताना जैसे खडा रहना-खडे रहकर कायुत्सर्ग करना, क्रिया करना, बैठना से इस प्रकार बैठना शयन करना, बडीनीत-लघुनीत मात्रा मुख का खेंकार नाक का श्लेष्म परिठाना, उच्चारादि से शरीर अशुद्ध हुआ होवे वह अशुचि दूर करना

सोवा उत्तारित्तएवा संतरित्तएवा, जत्थ नो एव चक्किया एव से नो कप्पइ अतो मासस्स दुक्खुत्तोवा तिक्खुत्तोवा उत्तरित्तएवा संतरित्तएवा ॥२७॥ से तणेसुवा तणपुंजेसुवा, पलालेसुवा, पलालपुंजेसुवा अप्पंडेसु अप्पपाणेसु, अप्पबीएसु, अप्पहरिएसु, अप्पोस्सेसु अप्पुत्तिंगपणगदगमट्टियामक्कडासंताणएसु, अहे सवणमायाए नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा तहप्पगारे उवस्सए हेमंतगिम्हासु वत्थए ॥ २८ ॥ से तणेसुवा आव

और दूसरा पांव स्थल पर रख अर्थात् दूसरे पांव को पानी से ऊपर कर उस को निवार बाद फिर पानी में रखे जा इस प्रकार उतरने जैसी नदी हो तो एक महिने में एक वक्त दो वक्त या तीन वक्त पांव से तथा नावा से उतरना कल्पे, परंतु ऊपर कही हुई पांवों चले नहीं जिस में एक पांव अंदर रख दूसरा पांव ऊपर करने समर्थ न हो उस को एक तीन वक्त पांव से अथवा नाव से उतरना नहीं कल्प ॥ २७ ॥ अब तृण के घर में रहने आश्रिय कहते हैं घांस का बनाया हुवा घर अथवा घांस का ढग का घर जिस को चारों तरफ भी घास हो और ऊपर भी घांस ढका हो जो निर्दोष हो अर्थात् पटपचादि के अंडे नहीं हो, बेइन्द्रीय आदि जीवों नहीं हो, वनस्पति हरी नहीं हो, पांचों रंग की छीलन फूलन नहीं हो, कच्ची मट्टि मिट्टि नहीं हो मकडी के जाले भी नहीं हो परन्तु मनुष्य पूरा खडा रहसके इतना ऊंचा नहीं हो खडा रहवे कान तक ऊंचा है तो उस में शीत काल उष्ण काल में एक महिना रहना नहीं कल्पता है ॥ २८ ॥ ऊपर कहे मुजब घांस

पयसु नवरमी दुइज्ज किलेन मुच्छआए पडमअत्ता एव स कप्पइ असणंवा पाणंवा खाइमंवा साइमंवा दाउवा अणुप्पदाउवा ॥ २९ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाणंवा निग्गं-थीणंवा इमं आ पंच महानईओ उद्दिट्ठाओ गणियाओ वंजियाओ अन्तो मासस्स दुक्खुत्तोवा तिक्खुत्तोवा उत्तरित्तएवा संतारित्तएवा तंजहा—गंगा जउणा सरयू कोसिया मही अह पुण एवं जाणज्जा एरवइ कुणालाए जत्थ चक्किया एगं पायं जले किच्चा एगं पायं थले किच्चा एवं से कप्पइ अन्तो मासस्स दुक्खुत्तोवा तिक्खु

और भी कोई आता जाता नहीं ऐसे रास्ते में वह तपस्वी पड़ जावे किलामना पावे मूर्च्छा प्राकार पड़जाय तो साधु साध्वी को कल्पता है कि उन को समझाकर एक वक्त आहार पानी भी लाकर देवे या शरीर नहीं सुधरे तो वारम्वार भी आहार पानी लाकर देना कल्पता है ॥ २९ ॥ साधु साध्वी को पांच नदी जो बड़ी कही है उस में से कोई भी नदी एक महीने में दो वक्त अथवा तीन वक्त पांवों से अथवा नावा से उतर कर पार होना कल्पता नहीं है, उन के नाम—१ गंगा, २ यमुना, ३ सरयु ४ कोशीया और ५ मही इन पांचों नदी में पानी बहुत होता है इस लिये विधी पूर्वक उतर कर पार होना नहीं बनता है, क्यों कि उत्थान की विधी यह है—जैसे कि एरावती नदी कुणाला नगर के पास बहती है उस का पानी जंघा डूबे इतना है तो उस नदी में उतरते एक पांव पानी में

॥ पंचम्–उद्देशा ॥

देवय इत्थिरूवं विउव्विता निग्गंथं पडिग्गाहेज्जा त च निग्गंथे साइज्जेज्जा, मेहुण पडिसेवणपत्ते आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ १ ॥ देवेय पुरिसरूवं विउव्वित्ता निग्गंथी पडिग्गाहेज्जा त च निग्गंथी साइज्जेज्जा, मेहुण पडिसेवण पत्ता आवज्जइ चाउम्मासिय परिहारट्ठाण अणुग्घाइयं ॥ २ ॥ देवीय इत्थिरूवं विउव्वित्ता निग्गंथं पडिग्गाहेज्जा त च निग्गंथे साइज्जेज्जा मेहुण पडिसेवणपत्ते, आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ ३ ॥ देवीय पुरिसरूवं विउव्वित्ता

कोई एक देवता स्त्री का रूप वैक्रय करके साधु का हस्त अपने हस्त में धारण करे, उस वक्त यह साधु देवी के या स्त्री के बरास उस के स्पर्श की अनुमोदन करे अच्छा जान तो उस साधु का ब्रह्मचर्य व्रत का भंग होवे और उसे गुरु चौमासिक प्रायःश्चित आवे ॥ १ ॥ कोई देवता पुरुष का रूप वैक्रय कर किसी साध्वी का हाथ पकडे, उस के स्पर्श की विषय भाव से साध्वी अनुमोदना करे तो उस का ब्रह्मचर्य भंग होवे, उसे भी गुरु चौमासिक प्रायःश्चित आवे ॥ २ ॥ कोई देवी स्त्री का रूप वैक्रेय कर किसी साधु का हाथ पकडे और साधु का उस स्त्री के स्पर्श को अच्छा माने तो उस के ब्रह्मचर्य का भंग होवे, उसे चौमासिक प्रायः श्चित आवे ॥ ३ ॥ कोई देवी पुरुष का रूप वैक्रय कर किसी साध्वी का

सताणसु उप्पिरसवण मापाण कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा तहप्पगारे उवस्सए हेमतगिम्हासु वत्थए ॥ २९ ॥ से तणेसुवा जाव सताणएसु अह रयणि मुक्कमउडे नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीवा तहप्पगार उवस्सए वासवास वत्थए ॥ ३० ॥ सेतणसुवा जाव सताणएसु उप्पिरयणि मुक्कमउड कप्पइ निग्गंथाणवा णिग्गंथीणवा तहप्पगार उवस्सए वासावास वत्थए ॥३१॥तिबेमि॥ कप्पे चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो॥४॥

का घर उक्त प्रकारही बीजादि रहित निर्दोष हो कान भर ऊंचा हो तो साधु साध्वी को शीत काल उष्णकाल में एक महिना उसमें रहना कल्पता है॥२९॥ उक्त प्रकार का ही तृण का घर जो मनुष्य के शरीर से एक हाथ ऊंचा नहीं हो तो साधुसाध्वी को उस में चतुर्मास करना नहीं कल्पता है॥ ३०॥ और उक्त प्रकार का मकान निर्दोष है तैसे ही मनुष्य से एक हाथ ऊपर ऊंचा है उस में वर्षा वस्त किसी प्रकार की घात न निपजती हो तो वहां साधु साध्वी को चतुर्मास करना भी कल्पता है सुधर्मा स्वामी कहते हैं, अहो जम्बू ! जैसा भगवंत पास सुना वैसा कहा इति बृहत्कल्प सूत्र का चौथा उद्देशा सपूर्ण ॥ ४ ॥

हारेमाणे अहपच्छा जाणेज्जा अणुग्गए सूरिए अत्थमिए वा से ज च मुहे जं च पाणिसि जं च पडिग्गहे त विगिंचमाणे विसोहेमाणे नाइक्कमइ, त अप्पणा भुंजमाणे अन्नेसिंवा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चाउमासिय परिहारट्ठाणं अणुग्घाइय ॥ १ ॥ भिक्खूय उग्गयवित्तीए अणत्थमिय संकप्पे संथडिए विइगिच्छा समावन्ने असणंवा

साधु साध्वी रोग रहित समर्थ शरीर के धारको का सूर्योदय बाद और सूर्य अस्त प्रथम आहार करना कल्पता है । कोइ प्रश्न करे कि सूर्य का उदय होते अथवा अस्त होते साधु को आहार करने का क्या प्रयोजन ? उत्तर कोइ साधु साध्वी बहुत दूर से विहार करके आये हैं रास्ते में आहार का योग नहीं बना अथवा अपूर्ण बना जिस से क्षुधा वेदना कर पीडित हो रहे हैं उस वक्त किसी ग्राम में आकर रहे हैं वहां नजदीक में किस हलवाइ आदि की दुकान है वह आमन्त्रण करे कि आपके आहार चाहियेगा मेरे यहां कुछ आहार है परन्तु अभी आप ग्रहण कीजीये फिर मेरे यहां आप काज पश्चात से या प्राहणो के आगमन से ग्रहण करने जैसा अवसर नहोगा एसा सुनकर साधु सूर्योदय के भरोसे या सूर्य अस्त न हुआ है ऐसे भरोसे [बद्दलादि कारण से भरम मे रहे] वह आहार ग्रहण कर भोगवने बैठे फिर सदेह दूर हुआ कि अभीतक सूर्योदय नहीं हुआ है अथवा सूर्य अस्त होगया है तो साधु का फर्ज है कि तुरंत हाथ का ग्रास नीचा रखकर मुंह का ग्रास निकाल कर रख दी रखदे वह सब आहार आप खावे नहीं, दूसरे को खिलावे

निग्गंथिं पडिग्गाहेजा तत्थ निग्गंथी साइज्जइ मेहुण पडिसेवणपत्ता आवज्जइ
चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ ४ ॥ भिक्खू य अहिगरणं कट्टु तं
अहिगरणं अविओसवेत्ता इच्छेज्जा अन्नगणं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए कप्पइ तस्स
पंचराइंदियाइं छेयं कट्टु परिणिव्वाविय २ तामेव गणं पडिनिज्जाएयव्वेसिया जहा वा
तस्स गणस्स पत्तियं सिया ॥ ५ ॥ भिक्खू य उग्गयवित्तीए अणत्थमियसंकप्पे
संथडिए निव्वितिगिच्छे असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेत्ता आहारमा

हाथ पकड उन पुरुष का स्पर्श मान साध्वी विषय भावसे अनुमोदन करे तो उसका ब्रह्मचर्य भंग होवे और गुरु चौमासिक प्रायश्चित आवे ॥ ४ ॥ कदाचित् साधु साध्वी के परस्पर क्लेश झगडा हुवा हो तो त्वरित उसका उपशम करना शांत करना जो बिना शांत किये कोई भी साधु अथवा साध्वी अन्य संघाडे को अंगीकार करके विचरे और उस संघाडे में जो बड साधु होवे उनके जानने में यह बात आवे कि अमुक साधु साध्वी क्लेश कर अपने सामिल हुवा है तो उस को पांच रात्रि का दीक्षा का छेद तथा प्रायश्चित देकर अपने पास रखना करे फिर उस को कोमल वचन से समझाकर शांत करे वह शांत हो जाय तो दूसरा पक्ष जहां से आया हो वहां भेजे. जिस से अन्य गच्छवाले का अप्रतीत उत्पन्न होवे यह जिन्दा का न्याय परम माननीय है ५ ॥ जब साधु साध्वी को सूर्योदय भये और सूर्यास्त पहिले आहारपानी ग्रहण करनेकी सोगनी करते हैं

हारेमाणे अहपच्छा आणेआ अणुग्गए सूरिए अत्थमिएवा से ज च मुहे जंच पाणिसि ज च पडिग्गहे त विगिंचमाणे विसोहेमाणे नाइक्कमइ, त अप्पणा भुंजमाणे अन्नेसिंवा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चाउमासिय परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ ६ ॥

भिक्खूय उग्गयवित्तीए अणत्थमिय संकप्पे संथडिए विइगिच्छा समावन्ने असणंवा

साधु साध्वी रोग रहित समर्थ शरीर के धारकों का सूर्योदय बाद और सूर्य अस्त प्रथम आहार करना कल्पता है। कोइ प्रश्न करे कि सूर्य का उदय होते अथवा अस्त होते साधु को आहार करने का क्या प्रयोजन ? उत्तर कोइ साधु साध्वी बहुत दूरस विहार करके आये हैं रास्ते में आहार का जोग नहीं बना अथवा अपूर्व बना जिस से क्षुधा वेदना कर पीडित हो रहे हैं उस वक्त किसी ग्राम में आकर रहे हैं वहां नजदीक में किस हलवाइ आदि की दुकान है उस आमंत्रण करे कि आपके आहार चाहियेता मेरे यहां कुछ आहारहै परंतु अभी आपग्रहण कीजीये फिर पेरे यहां काम काज वगैरह से या प्राहाको के आवागमन से ग्रहण करन जैसा अवसर नहींगा ऐसा सुनकर साधु सूर्योदय के भरोसे या सूर्य अस्त नहीं हुआ है ऐसे मरोसे [वस्त्रादि कारण से भरम से रहे] वह आहार ग्रहण कर भोगवने बैठे फिर सदेह दूर हुआ कि अभीतक सूर्योदय नहीं हुआ है अथवा सूर्य अस्त होगया है तो साधु का योग्य है कि तुरंत हाथ का मास नीचा रखकर मुखं का ग्रास निकाल कर वह भी रखदे वह सब आहार आप खावे नहीं, दूसरे को खिलावे

पाणंवा खाइमंवा साइमंवा पडिग्गाहत्ता आहारेमाहारेमाणे अह पच्छा जाणेज्जा अणुग्गए सूरिए अत्थमिएवा से जंच मुह जंच पाणिसि जंच पडिग्गहे तं विगिंचमाणे विसोहेमाणे नाइक्कमइ तं अप्पणा भुंजमाणे अन्नेसिंवा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाणं, अणुग्घाइयं ॥ ७ ॥ भिक्खूय उग्गयवित्तीए अणत्थमिय

नहीं परन्तु एकान्त स्थान प्रासुक निर्दोष जगहमें परठाय परिठावे तो तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे और जो वह आहार आप स्वयं खावे या दूसरे को खिलावेगा तो उसका रात्रि भोजन का दोष लगता उसे गुरु चौमासिक का प्रायश्चित आवे यह प्रथम भांग ॥६॥ २ साधु साध्वी आरोग्य शरीरवाले को सूर्योदय हुवा कि नहीं अथवा सूर्य अस्त हुवा कि नहीं ऐसी शंका है तब शास्त्रादि प्रमाण को पूछे कर कर कि सूर्योदय होगया है तथा अस्त नहीं हुवा है तब उसके वचनपर भरोसा रखकर आहार पानी ग्रहण किया फिर पश्चात् विचारने से जानने में आया कि अभीतक सूर्योदय हुवा नहीं तथा सूर्य अस्त हो गया है तो वह साधु उस वक्त हाथमें का मुखमें का ग्रास नीचे रखकर वह आहार एकान्त निर्दोष स्थानमें परिठावे तो तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे और जो उस आहारको आप खावे दूसरे साधुको खिलावे तो उसे रात्रि भोजन करने का दोष लगे उस को गुरु चौमासिक प्रायश्चित आवे यह दूसरा भांगा ॥ ७ ॥ २ साधु साध्वी रोगादि कारण से अथवा तपश्चर्यादि करने से शरीर से दुर्बल बन जो बडे कारण से

संकप्पे असंथडिए निव्वितिगिच्छे असणवा पाणंवा खाइमवा साइमवा पडिग्गाहेत्ता आहारमाहारमाण अहपच्छा जाणेज्जा अणुग्गए सूरिए अत्थमिएवा से जच मुहं जंच पाणिंसि जच पडिग्गहे त विगिंचमाणे विसोहेमाणे नाइक्कमइ, त अप्पणा भुंजमाणे अन्नेसिंवा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चाउम्मासिय परिहारट्ठाण अणुग्घाइय ॥ ८ ॥ भिक्खुय उग्गयवित्तीए अणत्थमियसंकप्पे असंथडिए विइगिच्छासमावन्ने असणवा ४, पडिग्गाहेत्ता आहारमाहारेमाणे अह पच्छा जाणेज्जा अणुग्गए सूरिए अत्थमिएवा, सेजच मुहे जच पाणिंसि जच पडिग्गहे त विगिंचमाणे विसोहेमाणे

उन को सूर्योदय की तथा अस्त की मन में शंका नहीं है, निशंकित चित्त से वे आहार पानी लाये हैं और आहार करने बैठे और देखा कि अब सूर्योदय हुवा है अथवा सूर्य अस्त होगया है, तो वह आहार आप भी नकर दूसर साधु का भी नहीं देवे एकान्त में जाकर परिठा देवे, जो वह आहार आप करे या दूसरेको कराव तो गुरु चौमासिक प्रायश्चित आवे यह चौथा भांगा॥८॥ ४ साधु साध्वी को रागादि कारण स या तपादिसे शरीर अशक्त होगया है और सूर्योदय अस्त की शंका भी है तो भी गृहस्थ के कहने से आहार पानी लेकर आये व आहार करने बैठे और फिर मालुम पडी कि अब सूर्योदय हुवा या अस्त हुवा है तो तुरंत मुख का ग्रास तथा हाथ का ग्रास डालकर उस

पाणंवा खाइमंवा साइमंवा पडिग्गाहित्ता आहारेमाहारेमाणे अह पच्छा जाणेज्जा अणुग्गए सूरिए अत्थमिएवा से जंच मुहे जंच पाणिंसि जंच पडिग्गहे तं विगिंचमाणे विसोहेमाणे नाइक्कमइ तं अप्पणा भुंजमाणे अन्नेसिंवा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चाउ म्मासियं परिहारट्ठाणं अणुग्घाइयं ॥ ७ ॥ भिक्खूय उग्गयवित्तीए अणत्थमिय

नहीं परन्तु एकान्त स्थान प्राशुक निर्दोष जगहमें परठाय परिष्ठापे तो तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे और जो वह आहार आप स्वयं खावे या दूसरे को खिलावेगा तो उसको रात्रि भोजन का दोष लगता उसे गुरु चौमासिक का प्रायश्चित्त आवे यह प्रथम भांगा ॥६॥ २ साधु साध्वी आरोग्य शरीरवाले को सूर्योदय हुवा कि नहीं अथवा सूर्य अस्त हुवा कि नहीं ऐसी शंका है तब दातारादि प्रमुख को पूछे वह कहे कि सूर्योदय होगया है तथा अस्त नहीं हुवा है तब उसके वचनपर भरोसा रखकर आहार पानी ग्रहण किया फिर पश्चात् विचारने से जानने में आया कि अभीतक सूर्योदय हुवा नहीं तथा सूर्य अस्त हो गया है तो वह साधु उसवक्त हाथमें या मुखमें का ग्रास नीचे रखकर वह आहार एकान्त निर्दोष स्थानमें परिठावे तो तीर्थंकर की आज्ञाका उल्लंघन नहीं करे और जो उस आहारको आप खावे दूसरे साधुको खिलावे तो उसे रात्रिभोजन करने का दोष लगे उस का गुरु चौमासिक प्रायश्चित्त आवे यह दूसरा भांगा ॥ ७ ॥ ३ साधु साध्वी रोगादि कारण से अथवा तपश्चर्यादि करने से शरीर के दुर्बल पन हों उसे कारण से

विसोहेत्राएत्रा तं नो अप्पणा भुंजेज्जा नो अन्नोसिं अणुप्पदेज्जा, ऐगन्त बहुफासुए थंडिल पडिलहित्ता पमज्जित्ता परिट्ठवेयव्वे सिया ॥ ११ ॥ निग्गंथस्सय गाहावइकुलं पिंडवाय पडियाए अणुप्पविट्ठस्स अंतोपडिग्गहंसि दएत्रा दगरएवा दगफुसिएत्रा परियावज्जेज्जा सेय उसिण भोयणजाए परिभोतव्वेसिया, सेय सीयभोयणजाए तं नो अप्पणा भुंजेजा नो अन्नासिं अणुप्पदज्जा, एगंत बहुफासुए थंडिले पडिलहित्ता पमज्जित्ता परिट्ठवेयव्वेसिया ॥१२॥ निग्गंथीएय राओवा वियालेवा उच्चारवा पासवणवा विगिंचमाणीए

परना पूरा निकालकर दूर करे शुद्ध करके फिर उस आहार को भोगवे कदाचित वह बेन्द्रिय आदि जीव सरिस रज दूर होने जैसे नहोवे तो उस आहार को आप भी नहीं खावे दूसरे का भी नहीं खिलावे परंतु एकान्त में जाकर परिठ देवे ॥ ११ ॥ साधु साध्वी गृहस्थ के घर को आहार पानी ग्रहण करने गये आहार पानी पात्र में ग्रहण किया, इतने में अकस्मात् उस में कच्चा पानी पडगया जो ग्रहण किया हुवा आहार पानी गरम होवे और उस में पानी का बुन्दपड अचेत बन गया ऐसा निश्चय होवे तो उस आहारपानीको भोगवे और जो वह आहारपानी ठन्डा होवे उसमें पडा हुवा पानी अचेत नहीं होवेतो वह आहार आप भोगवे नहीं दूसरे को देवे नहीं परंतु एकान्त में फासुक जगा देखकर उसे परिठावे॥१२॥साध्वी रात्रि को वडी नीत करने बैठी हो अथवा लघुनीत करने बैठी हो उठ कर निवृती शरीर शुद्ध करती हो उस वक्त

नाइक्कमइ त अप्पणा भुञ्जमाणे अन्नेसिंवा अणुप्पदेमाणे आवज्जइ चउम्मासिय परिहारट्ठाण अणुग्घाइय ॥ ९ ॥ इह खलु निग्गथस्सवा निग्गथीएवा राओवा वियालेवा सपाणे सभोयण उग्गाले आगच्छज्जा तं विगिंचमाणे विसोहेमाणे नाइक्कमइ तं उग्गिलित्ता पच्चोगिलमाणे राइभोयण पडिसेवणपत्ते आवज्जइ चाउम्मासिय परिहारट्ठाणं अणुग्घाइय ॥ १० ॥ निग्गथस्सय गाहावइएकुल पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठस्स अतो पडिग्गहसि पाणेवा बीएवा रएवा परियावज्जज्जा तंच सचाएइ विगिंचएवा विसोहएवा तओ सजयामेव भुञ्जज्जावा पिएज्जवा तंच नो सचाएइ विगिंचातएवा

आहार को अमुक स्थान में परिठवे तो तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करे और जो उस आहारको आप करे तथा दूसरको करावे तो उनको रात्री भोजन करनेका दोष लगे जिसका गुरु चौमासिक प्रायश्चित आवे ॥ ९ ॥ साधु साध्वी को डकार उबाक आने से प्रथम किया हुवा आहार पानी मुख में आजावे तो तुर्त बाहिर परिठावे तो तीर्थंकर की आज्ञा उल्लंघे नहीं जो उस को पीछा गले नावे उतार लेवे तो उसे रात्री भोजन प्रतिसेवन का दोष लगे गुरु चौमासिक प्रायश्चित आवे ॥ १० ॥ साधु साध्वी आहार के लिये गृहस्थ के घर गये आहार पानी आदि पात्र में ग्रहण किया फिर पात्र में बेन्द्रिय आदिक जीव आकर पड़े अथवा तिलक आदि की सचित रज आकर अंदर पडी तो उस जीव का तथा रज को

विसोहेत्ताएवा तं नो अप्पणा भुंजेज्जा नो अन्नेसिं अणुप्पदेज्जा, एगन्त बहुफासुए थंडिल पडिलेहित्ता पमज्जित्ता परिट्ठवेयव्वे सिया ॥ ११ ॥ निग्गंथस्सय गाहावइकुलं पिंडवाय पडियाए अणुप्पविट्ठस्स अंतापडिग्गहंसि दएवा दगरएवा दगफुसिएवा परियाव ज्जेज्जा सेय उसिण भोयणजाए परिभोतव्वेसिया, सेय सीयभोयणजाए तं नो अप्पणा भुंजेज्जा नो अन्नेसिं अणुप्पदेज्जा, एगंत बहुफासुए थंडिले पडिलेहित्ता पमज्जित्ता परिट्ठवे यव्वेसिया ॥१२॥ निग्गंथीएय राओवा वियालेवा उच्चारंवा पासवणंवा विगिंचमाणीए

परना पूरा निकालकर दूर करे शुद्ध करके फिर उस आहार को भोगवे कदाचित वह बेन्द्रिय आदि जीव सजिव रज दूर होने जैसे नहोवे तो उस आहार को आप भी नहीं खावे दूसरे का भी नहीं खिलावे परंतु एकान्त में जाकर परिठ देवे ॥ ११ ॥ साधु साध्वी गृहस्थ के घर को आहार पानी ग्रहण करने गये आहार पानी पात्र में ग्रहण किया, इतने में अकस्मात् उन में कच्चा पानी पडगया जो ग्रहण किया हुवा आहार पानी गरम होवे और उस में पानी का बुन्दपड अचेत बन गया ऐसा निश्चय होवे तो उस आहारपानीको भोगवे और जो वह आहारपानी ठन्डा होवे उसमें पडा हुवा पानी अचेत नहीं होवेतो वह आहार आप भोगवे नहीं दूसरे से भुक्ता देवे नहीं परंतु एकान्तमें प्रासुक जगा देखकर उसे परिठादेवे॥१२॥साध्वीरात्रि को वडी नीत करने बैठी हो अथवा लघुनीत करने बैठी हो उठे कर निवृतती शरीर शुद्ध करती हो उस वक्त

वा त्रिसोहयाणीएवा अन्नयरे पसुजाईएवा पक्खिजाईवा अन्नयर इंदियजाए त परामुसेज्जा तंच निग्गंथी साइज्जेज्जा हत्थकम्म पडिसेवणपत्ता आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाण अणुग्घाइय॥ १३॥निग्गंथीएय राओवा वियालेवा उच्चारंवा पासवणंवा विगिंचमाणीएवा विसोहमाणीएवा अन्नयरे पसुजाइएवा पक्खिजाइएवा अन्नयरंसि सोयांसि ओग्गाहेज्जा तंच निग्गंथी साइज्जेज्जा मेहुण पडिसेवणपत्ता आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाण अणुग्घाइय ॥ १४ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणियाए होत्तए ॥ १५ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणियाए गाहावइ कुल भत्ताएवा पाणाएवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा

कोई पशु अथवा पक्षी साध्वी की योनीआदि इन्द्रीय के स्थान स्पर्श करे उस का स्पर्श मनोज्ञ लगने से उस साध्वी खुशी होवे तो उस हस्तकर्म करने का दोष लगे उस गुरु चौमासिक प्रायः श्चित्त आवे ॥ १३ ॥ साध्वी को रात्रि का अथवा श्याम को लघुनीत बडीनीत की निवृत्ती करते कोई पशु पक्षी की जाति आकर साध्वी के योनी स्थान अपना शरीर कर स्पर्श करे उसे विषय बुद्धि कर अनुमोदे तो उसे मैथुन सेवन का दोष लगे उस का गुरु चौमासिक प्राय श्चित्त आवे॥१४॥साध्वी को अकेला रहना कल्पता नहीं है ॥ १५ ॥ साध्वी को अकेला गृहस्थ के घर आहार पानी आदि लेने के लिये गोचरी जाना कल्पता

॥ १६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणीयाए बहिया वियारभूमिंवा विहारभूमिंवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा ॥ १७ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणियाए गामाणुगाम दूइज्जित्तए ॥ १८ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए अचलियाए होत्तए ॥ १९ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए अपाइयाए होत्तए ॥ २० ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए वोसट्ठकाइयाए होत्तए ॥ २१ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए बहिया गामस्स वा जाव संनिवेसस्स वा उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ सूराभिमुहाए एग पाइयाए ठिच्चा आयावणाए आयावेत्तएवा ॥ २२ ॥ कप्पइ से उवस्सयस्स अतो वगडाए संघाडि

नहीं है ॥ १६ ॥ अकेली साध्वी को स्थानक के बाहिर थंडिल की भूमीमें अथवा स्वाध्याय की भूमी में गमन करना नहीं है ॥ १७ ॥ अकेली साध्वी को ग्रामानुग्राम विहार करना अथवा चौमासे रहना कल्पता नहीं है ॥ १८ ॥ साध्वी को वस्त्र रहित नग्न रहना कल्पता नहीं है ॥ १९ ॥ साध्वी को पात्र रहित रहना कर पात्र करना कल्पता नहीं है ॥ २० ॥ साध्वी को अपना शरीर उघाडा कर बैठा रहना कल्पता नहीं है ॥ २१ ॥ साध्वी को ग्रामादि के बाहिर जाकर दोनों हाथ ऊंचे कर सूर्य सन्मुख खडी रहकर आतापना लेनी कल्पता नहीं है ॥ २२ ॥ साध्वी को आतापना लेने की तपश्चर्या करनी हो

वा त्रिसाहयाणीएवा अन्नयर पमुजाईएवा पविस्सजाइवा अन्नयर इंदियजाए त परामुसेज्जा तेच निग्गथी साइज्जेज्जा हत्थकम्म पडिसवणपत्ता आवज्जइ चाउम्मासियं परिहारट्ठाण अणुग्घाइय॥ १३॥निग्गथीएय राओवा वियालवा उच्चारवा पासवणंवा विगिंचमाणीएवा विसोहमाणीएवा अन्नयर पमुजाइएवा पविस्सजाइएवा अन्नयरसि सोयासि ओग्गाहेज्जा तच निग्गथी साइज्जेज्जा मेहुण पडिसेवणपत्ता आवज्जइ चाउम्मासिय परिहारट्ठाण अणुग्घाइय ॥ १४ ॥ नो कप्पइ निग्गथीए एगाणियाए होत्तए ॥ १५ ॥ नो कप्पइ निग्गथीए एगाणियाए गाहवइ कुल भत्ताएवा पाणाएवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा

कोई पशु अथवा पक्षी साध्वी की पानीआदि इन्द्रीय के स्थान स्पर्श करे उस का स्पर्श मनोज्ञ लगने से उसे साध्वी भुई रहे तो उस हस्तकर्म करन का दोष लगे उस गुरु चौमासिक प्रायश्चित्त आवे ॥ १३ ॥ साध्वी को रात्रि का अथवा श्याम को लघुनीत बडीनीत की विशुद्धी करते कोई पशु पक्षी को मासि भाकर साध्वी के योनी स्थान अथवा शरीर कर स्पर्श करे उसे विषय बुद्धि कर अनुमोदे तो उसे मैथुन सेवन को दोष लगे उस का गुरु चौमासिक प्राय श्चित्त आवे॥१४॥साध्वी को अकेला रहना कल्पता नहीं है ॥ १५ ॥ साध्वी को अकेला गृहस्थ के घर आहार पानी आदि लेने के लिये गोचरी जाना कल्पता

॥ १६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणियाए बहिया वियारभूमिं वा विहारभूमिं वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ १७ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगाणियाए गामाणुगाम दूइज्जित्तए ॥ १८ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए अचेलियाए होत्तए ॥ १९ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए अपाइयाए होत्तए ॥ २० ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए वोसट्ठकाइयाए होत्तए ॥ २१ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए बहिया गामस्स वा जाव सन्निवेसस्स वा उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ सूराभिमुहाए एग पाइयाए ठिच्चा आयावणाए आयावेत्तए वा ॥ २२ ॥ कप्पइ से उवस्सयस्स अतो वगडाए संघाडि

नहीं है ॥ १६ ॥ अकेली साध्वी को स्थानक के बाहिर थंडिल की भूमीमें अथवा स्वध्याय की भूमी में जाना कल्पता नहीं है ॥ १७ ॥ अकेली साध्वी को ग्रामानुग्राम विहार करना अथवा चौमासे रहना कल्पता नहीं है ॥ १८ ॥ साध्वी को वस्त्र रहित नग्न रहना कल्पता नहीं है ॥ १९ ॥ साध्वी को पात्र रहित रहना कर पात्र करना कल्पता नहीं है ॥ २० ॥ साध्वी का अपना शरीर वघाडा कर पैरा रहना कल्पता नहीं है ॥ २१ ॥ साध्वी को ग्रामादि के बाहिर जाकर दोनों हाथ ऊंचे कर सूर्य सन्मुख खडे रहकर आतापना लेनी कल्पता नहीं है ॥ २२ ॥ साध्वी को आतापना लेने की सत्मर्या करनी हो

पडिमट्ठाए समतपाइयाए ट्ठित्ता आयावणाए आयावेत्तए ॥ २३ ॥ ना कप्पइ निग्गंथीए ठाणाइयाए होत्तए ॥ २४ ॥ ना कप्पइ निग्गंथीए पडिमट्ठाइयाए होत्तए ॥ २५ ॥ ना कप्पइ निग्गंथीए ठाणुक्कुडियासणियाए होत्तए ॥ २६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए नेसज्जियाए होत्तए ॥ २७ ॥ ना कप्पइ निग्गंथीए वीरासणीयाए होत्तए ॥ २८ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए दण्डासणियाए होत्तए ॥ २९ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए लगंडा

जो बड़ा भी मकान चारों तरफ घेरा हुवा हो उस के किसी एक चारों तरफ पछेवडी बन्धकर पडदा लगाकर, वहां दोनों हाथ नीचे लम्बकर रखकर जमीन पर खडी रहकर सूर्य की आतापना लेना कल्पता है ॥ २३ ॥ साध्वी को ठाणादि एकवास कल्पते नहीं है वे आगे कहते हैं ॥ २४ ॥ साध्वी को बारे पडिमा जो साधु की है वह आदरनी नहीं कल्पती है ॥ २५ ॥ साध्वी को उकडूआसन से बैठकर काउस्सग्ग करना नहीं कल्पता है ॥ २६ ॥ साध्वी को पद्मासन से कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ २७ ॥ साध्वी को वीरासन लगाकर काउस्सग्ग करना नहीं कल्पता है (कुर्सी पर बैठ पांव को निकाल कर और वैसे ही आसन से रहे वह वीरासन) ॥ २८ ॥ साध्वी को दंड आसन से (स्तंभ की तरह खडी रह) कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ २९ ॥ साध्वी को लगडासन (चित्ता सयन कर मस्तक का चित्ता (पांव) स्थान और

सणियाए होत्तए ॥ ३० ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए ओमथियाए होत्तए ॥ ३१ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए उत्ताणियाए होत्तए ॥ ३२ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए अंबक्खुज्जियाए होत्तए ॥ ३३ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीए एगपासियाए होत्तए ॥ ३४॥ नो कप्पइ निग्गंथीणं आउंचणपट्टगं धारेत्तए वा परिहरित्तए वा ॥ ३५ ॥ कप्पइ निग्गंथाणं आउंचणपट्टगं धारित्तए वा परिहरित्तए वा ॥ ३६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीणं सावस्सयंसि आसणंसि आसइत्तए वा तुयट्टित्तए वा ॥ ३७ ॥ कप्पइ निग्गंथाणं सावस्सयंसि आसणंसि

पांव की एडी जमीन को लगा बाकी सब शरीर अधर रख) कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ ३० ॥ साध्वी को उलटी शयन कर कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ ३१ ॥ साध्वी को चित्ती शयन कर कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ ३२ ॥ साध्वी को अम्बखुजा आ (पांव हाथ एकत्र कर) शयन कर कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ ३३ ॥ साध्वी को एक पसवाड शयन कर कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ ३४ ॥ साध्वी का वस्त्र से पालखी [दोनों घुटने] बांधकर कायोत्सर्ग करना नहीं कल्पता है ॥ ३५ ॥ साध्वी को वस्त्रादि की पालखी बांध (दोनों घुटने छाती का लगा वस्त्र से पांव हाथ को बांध) रहना नहीं कल्पता है ॥ ३६ ॥ साध्वी को जिस आसन के पीछे टेका हो एस आसन पर टेका

आमइत्तण्त्रा तुयट्टित्तण्त्रा ॥ ३८ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीण सविसाणंसि फलगंसित्रा पीढंसित्रा चिट्ठित्तएत्रा निसीइत्तण्त्रा ॥ ३९ ॥ कप्पइ निग्गंथाण सविसाणंसि जाव निसीइत्तण्त्रा ॥ ५ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीण सवेंटय लाउय धारेत्तएत्रा परिहरित्त एत्रा ॥४१ ॥ कप्पइ निग्गंथाण सवेंटय लाउय धारेत्तएत्रा परिहरित्तण्त्रा ॥ ४२ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीण सवेंटय पायकेसरिय धारेत्तएत्रा परिहरित्तएत्रा ॥ ४३ ॥ कप्पइ निग्गंथाण सवेंटय पायकेसरिय धारेत्तएत्रा परिहरित्तण्त्रा ॥ ४४ ॥ नो कप्पइ निग्गंथीण दारुदंडय पायपुंछण धारेत्तएत्रा परिहरित्तएत्रा ॥ ४५ ॥ कप्पइ निग्गं

स बैठना नहीं कल्पता है ॥ ३७ ॥ परंतु साधु को पीछ टेका हो एस आसन से बैठना कल्पता है ॥३८॥ साध्वी का पीछे टेका वाले पाटपर तथा चोकी पर खड़ा रहना बैठना नहीं कल्पता है ॥ ३ ॥ साधु को पीछे टेक वाले आसन पर बैठना खड़ा रहना कल्पता है ॥ ४० ॥ साध्वी को नाल (बींट) सहित तुम्बा रखना नहीं कल्पता है ॥ ४१ ॥ साधु को नाल (बींट) सहित तुम्बा रखना कल्पता है ॥ ४२ ॥ [illegible] को देही सहित गोछा (पूंजनी) रखना तथा भोगवना नहीं कल्पता है ॥ ४३ ॥ साधु को सदी [illegible] रखना कल्पता है ॥ ४४ ॥ साध्वी को लकड़े की (दंडी) डंडी वाला रजोहरण रखना कल्पता नहीं कल्पता है (परंतु आचारांग नीशीथ सूत्रानुसार नीशीथीया रखना कल्पता है) ॥ ४५ ॥

थाण दारुदंडय पायपुञ्छण धारत्तए वा परिहरित्तए वा ॥ ४६ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अन्नमन्नस्स मोएण आयमित्तए नन्नत्थ आगाढेहिं रोगायंकेहिं ॥ ४७ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अन्नमन्नस्स मोए आइइत्तए, नन्नत्थ आगाढेहिं रोगायंकेहिं ॥ ४८ ॥ नो कप्पइ निग्गंथाण

साधु को लकड़ की दंडी का रजोहरण रखना कल्पता है परंतु नीशीथीया बधना चाहिये ॥ ४६ ॥ साधु साध्वी को परस्पर मात्रा ग्रहण करना कल्पता नहीं है परन्तु कोई गाढागाढी कारण रोगादि के लिए अथवा सर्पादि का दंश हो उस का जेहर उतरने आदि कारण से लेना पड़े सो आगार है ॥ ४७ ॥ साधु साध्वी को परस्पर मात्र (पिशाब) देना कल्पता नहीं है परन्तु कोई गाढागाढी उक्त कारण हो उस का आगार है + ॥ ४८ ॥ साधु साध्वी का प्रथम पहर में ग्रहण किया हुवा आहार

+ मूत्र के गुण १ शालिग्राम निघण्ठ भूषण भाग ७ का पृष्ठ ९९९ का सं १९२२ मे खेमराज श्रीकृष्ण दास कृत मे छपा है-श्लोक-मानुषं क्षारं कटुकं मधुरं लघु चोष्णवत् ॥ चक्षूरोगहरं बल्यं दीपनं कफनाशनम् ॥ १ ॥ अर्थात्-मनुष्य का मूत्र खारा कडुवा हल्का, नेत्ररोग का नाश करने वाला बल करता, दिसी करता, क्षुधा लगाने वाला और कफ नाश करने वाला होता है ॥ २ हरित संहिता जयराम नाथ का पृष्ठ ९१ सं० १९५८ मे छपे हुवे में ऊपर का निर्दिष्ट जैसा ही श्लोक है ॥ ३ भाव प्रकाश पूर्वखंड पत्र ४८२ में सं १९१२ के छपे में यह भी जयराम रघुनाथ कृत है इस में-श्लोक

थाण दायदंडय पायपुच्छण धोरचएथा परिहरित्तिएत्ता ॥ ४६ ॥ नो कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा अन्नमन्नस्स मोएण आयमित्तए नन्नत्थ आगाढहिं रोगायकेहिं ॥ ४७ ॥ नो कप्पइ निग्गथाणवा निग्गथीणवा अन्नमन्नस्स मोए आइइत्तए, नन्नत्थ आगाढहिं रोगायकेहिं ॥ ४८ ॥ नो कप्पइ निग्गथाण

साधु के लकड की दंडी का रमाहरण रखना कल्पता है परतु नीशीथीया रखना चाहिये ॥ ४६ ॥ साधु साध्वी को परस्पर मात्रा ग्रहण करना कल्पता नहीं है परतु कोई गाढागाढी कारण रोगादि क लिए अथवा सर्पादि का दंश हो उस का जेहर उतरने आदि कारण से लेना पडे तो आगार है ॥ ४७ ॥ साधु साध्वी को परस्पर मात्र (पिशाब) देना कल्पता नहीं है परंतु कोई गाढागाढी उक्त कारे सो कारण हो उस का आगार है + ॥ ४८ ॥ साधु साध्वी का प्रथम पहर में ग्रहण किया हुवा आहार

+ मूत्र के गुण १ शालिग्राम निघण्ठ भूषण भाग ७ वा पृष्ठ ९९१ वा सं १९५१ में खेमराज श्रीकृष्ण दास कृत में छपा है-श्लोक-मानुषं क्षारं कटुकं मधुरं लघु चोच्यते ॥ चक्षुरोगहर बल्यं दीपनं कफनाशनम् ॥ १ ॥ अर्थात्-मनुष्य का मूत्र खारा कडुवा हल्का, नेत्ररोग का नाश करने वाला बल करता, दिप्ती करता, क्षुधा जगाने वाला और कफ नाश करने वाला होता है ॥ २ हरित संहिता जयराम नाथ का पृष्ठ ९६ सं १९५८ में छपे हुवे में ऊपर के निर्दिष्ट जैसा ही श्लोक है ॥ ३ भाव प्रकाश पूर्वखंड पत्र ४८२ में सं १९५२ के छपे में यह भी जयराम रघुनाथ कृत है इस में-श्लोक

विंदुप्पमाणमेत्तमवि आहारमाहारेत्तए नन्नत्थ आगाढेहिं रोगायकेहिं ॥ ४९ ॥
नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा परियासिएणं आलेवणजाएण गायाइ आलिं-
पित्तएवा विलिंपित्तएवा नन्नत्थ आगाढेहिं रोयायकेहिं ॥ ५० ॥ नो
कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा पारियासिएण तेल्लेणवा घएणवा नवणिएणवा
वसाएवा गायाइ अब्भंगेत्तएवा मक्खेत्तएवा नन्नत्थ आगाढेहिं रोगायकेहिं ॥ ५१ ॥
नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा कक्केणवा लोद्धेणवा पधूवणेणवा अन्नयरेणवा,

चौथे पहर तक रख सकते हैं परंतु रात्रि को तो बिलकुल ही नहीं रख सकते हैं॥४९॥साधु साध्वी को प्रथम
पा\ का ग्रहण किया औषध तथापि चौथे पहर में एक बार अथवा बारम्बार बापरना कल्पता नहीं है
परंतु कोई रोगादि कारण से चौथे पहर में मिलन लायक नहीं हो तो उसे चौथे प्रहर तक रखे (परंतु
रात को नहीं रख सकते हैं) ॥ ५० ॥ साधु साध्वी को प्रथम प्रहर में ग्रहण किया हुवा तेल, घृत,
मक्खन, आपकी योग्य सुगंधी द्रव्य चौथे प्रहर में अपने शरीर को लगाना बारम्बार लगाना
मथाळना कल्पता नहीं है परंतु उक्त वस्तु ना चौथे प्रहर में मिलने जैसी नहीं हो तो और शरीर में
रोगादि कारण हो तो चौथे प्रहर भी काम आती है परंतु रात्रि को नहीं रख सकते हैं ॥ ५१ ॥ साधु
साध्वी काढ़ा, लोद्र धूप और भी इस प्रकार के सुगंधी द्रव्य शरीर को लगाना नहीं कल्पता है. परंतु

एवं से कप्पइ तेणेव भत्तट्ठेणं पज्जोसवेत्तए, सी य नो संथरे, एवं से कप्पइ दोच्चंपि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ ५४ ॥ त्तिबेमि ॥ कप्पे पंचमो उद्देसओ सम्मत्तो ॥ ५ ॥

सरस आहार मिला हो जितना मिला हो उतना ग्रहण कर स्वस्थान आवे उस दिन उतना ही आहार संतोष मान भूखे पर गोचरी न जावे, क्यों कि सरस आहार पचाना मुश्कील होता है, तथा वह भी वर्षाव कारक है, कदापि उतने से उदर पूर्ण न हो क्षुधा सहन कर सकती न हो तो दूसरी वक्त गोचरी करने जाना कल्पता है ॥ ५४ ॥ सुधर्मा स्वामी कहते हैं अहो जम्बू! मैंने ऐसा भगवंत के पास सुना वैसा तेरे से कहा. ॥ इति बृहत्कल्प सूत्र का पांचवा उद्देशा समाप्त हुआ ॥ ५ ॥

आलवणजाएण गायाइ उव्वलत्तएवा नन्नत्थ आगाढेहिं रोगायंकेहिं ॥ ५२ ॥ परिहार कप्पट्ठिएण भिक्खू गहिया थराण वेयावडियाए गच्छेजा, सेय आहच्च अइ क्कमेज्जा त च थरा जाणजा अप्पणा आगमेण अन्नसिंवा अतिए, साचा तओ पच्छा तस्स अहालहुसए नाम ववहार पट्ठवियव्वसिया ॥ ५३ ॥ निग्गथीएय गाहावइकुल पिंडवायपडियाए अणुप्पविट्ठाए अन्नयर पुलागभत्त पडिग्गाहिएसिया, साय संथरेजा,

रोगादि कारण हो तो करना है ॥ ॥ कोई परिहारविशुद्ध चारित्रवाला साधु परिहारविशुद्ध चारित्र का पालन करता है उस वक्त दूसरे ग्राम में रहे हुवे उन स्थविर का परिहारविशुद्धी साधु को नहीं पटी तब उस संघ का वे स्थविर बुलावे तो वह तुर्त उन स्थविर के पास जावे, जो काम स्थविर बताव वह काम आप करे फिर स्थविर आगम के ज्ञान कर या दूसरे साधु के कहने से जाने कि इस परिहारविशुद्ध चारित्रीने कुछ दोष का सेवन किया है तो उस परिहारविशुद्ध चारित्र को छोडकर आप हुवे साधु को उक्त विहार संघमें के लिये-नाम मात्र का कुछ प्रायश्चित देकर परिहारविशुद्ध चारित्र का आराधन करने पीछा भेजे (प्रश्न-ऐसा क्या अपूर्व काम है सो स्थविर परिहारविशुद्धी चा रित्रीको बोलावे ? उत्तर-कोई चक्रवर्त्यादि महाराजा प्रश्न पूछने आये हो और उस का उत्तर परिहार विशुद्धी संयमी देने में समर्थ हो तो उसे बोलावे) ॥ ५३ ॥ कोई साध्वी गृहस्थ के यहां गोचरी गई है वहां

॰ अपुरिसवाई वयमाणे दासवाय वयमाणे, इच्चेए कप्पस्स छप्पत्थारे पत्थरेत्ता सम्म
१ अप्पडिपूरेमाणे तट्ठाणपत्ते सिया ॥ २ ॥ निग्गंथस्स य अहे पायंसि खाणूएवा,
जो झूठा वचन बोले वह प्रायश्चित्त का अधिकारी वह होता है २ कोई साधु झूठ नहीं बोला हो और उसपर
झूठ बोलने का कोई कलंक चढाने तो उस को झूठ बोलने का जो प्रायश्चित होता है वह प्रायश्चित
झूठ बोलने के कलंक चढाने वाले को आता है ३ ऐसे ही किसीने चोरी नहीं की और उस के शिर
चोरी का कोई खोटा कलंक चढाव तो उस कलंक चढाने वाले को चोरी करने का जो प्राय श्चत हो
सो दिया जावे, ४ एसे किसी साधुने अब्रह्म सेवन नहीं किया और उस पर कोई अब्रह्म सेवन
का कलंक चढाव तो कलंक चढाने वाले को अब्रह्म सेवन का प्रायश्चित दिया जावे ५ किस के शिर
कलंक चढाने एसा करे कि यह साधु तो हुवा है परन्तु नपुंसक है इस के मात पिताने मुझे गुप्त रखा था,
एसा कलंक चढावे तो उसे भी वह प्रायश्चित आता है और ६ कोई साधु किसी साधु के सिर कलंक
चढान करे कि यह दास था अमुकने इस को मोल लिया था एसा दास का कलंक चढाव तो उस को भी
वैसा ही प्राय श्चित आता है इस प्रकार जो झूठा कलंक किसी के शिर चढाता है तो उस को उस कलंक
का जो पाप होता है वह कलंक चढाने वाले को लगता है उस प्राय श्चित का अधिकारी वह कलंक
चढानेवाला होता है, और जो सच्ची बात हो तो प्राय श्चित का अधिकारी पाप करनेवाला होता है, गुरु
कृपा करके विचार करना योग्य है ॥ २ ॥ साधु के पांव में खीला, कांटा, कांच, कंकर

॥ षष्ठोद्देशः ॥

नो कप्पइ निग्गंथाणवा निग्गंथीणवा इमाइं छ अवत्तव्वाइं वइत्तए तंजहा अलियवयणं हीलियवयणं खिंसियवयणं फरुसवयणं गारत्थियवयणं विओसवियंवा पुणो उदीरित्तए ॥ १ ॥ छ कप्पस्स पत्थारा पण्णत्ता तंजहा—पाणाइवायस्स वायं वयमाणे मुसावायस्स वायं वयमाणे अदिन्नादाणस्स वायं वयमाणे अविरइयावायं वयमाणे

साधु साध्वी को छ प्रकार के अवक्तव्य (कु वचन) वचन बोलना नहीं कल्पता है उन के नाम—१ झूठ असत्य वचन २ दूसरे की हीलना निन्दा हास्य के वचन ३ दूसरा मनुष्य सोच शर्मिन्दा हो बोल सके नहीं ऐसा वचन ४ कठोर वचन अरे मूर्ख ! इत्यादि ५ गृहस्थ जैसे सगपण निर्लज्ज वकार मकारादी गाली के वचन और ६ क्लेश शान्त हो गया उस पीछे उदय हो जावे ऐसे वचन ॥ १ ॥ छठे आचारवाले साधु को छ प्रकार का प्रायश्चित्त देना कल्पता है उन के नाम—१ किसी के शिर खोटा कलंक (झूठा) चढावे यथा दृष्टान्त गुरु शिष्य रास्ते चलते गुरु के पांव के नीचे मरा हुआ मेंडक का कलेवर आगया तब शिष्यने गुरु के शिर खोटा कलंक चढाया कि तुमारे पांव के नीचे चांपा हुआ मेंडक मारा गया ! उसने आकर आचार्य को कहा तब आचार्यने निश्चय करके मेंडक मारने से जो प्रायश्चित्त आता है वह शिष्य को दिया यद्यपि उसने जीव मारा नहीं था तो भी, खोटा कलंक चढाने वाला होने से उसने प्रायश्चित्त का अधिकारी बना वो प्राणातिपात का

कंटएवा हीरेवा,परियावज्जेज्जा तंच निग्गंथे नो संचाएइ नीहरित्तएवा विसोहेत्तएवा, तं निग्गंथी नीहरमाणीवा विसोहमाणीवा नाइक्कमइ॥ ३॥ निग्गंथस्स य अच्छिंसि पाणेवा, बीएवा, रएवा, परियावज्जेज्जा तंच निग्गंथे नो संचाएइ नीहरित्तएवा विसोहेत्तएवा, तं निग्गंथी नीहरमाणीवा विसोहमाणीवा नाइक्कमइ ॥ ४ ॥ निग्गंथीए य अहे पायंसि खाणूएवा, कंटएवा हीरेवा परियावज्जेज्जा तंच निग्गंथी नो संचाएइ नीहरित्तएवा

कांच आदि कुछ लगा हो वह अंदर टूट गया हो उस को वह साधु स्वयं निकालने समर्थ न हो अन्य कोई साधु आदि भी निकालनेवाला पास न हो तो साध्वी उस कांटे आदि को निकालती हुई तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करती है (यहां यह मतलब है कि कोई साधु ज्ञानादि गुणवंत विशेष तपस्वी हो जिस का शरीर किंचित्भी विकार रहित हो गया हो ऐसा साधु कांटे आदि लगने से ध्यान चलन से बिलकुल अटक गया हो वहां अन्य साधु व गृहस्थ कोई भी कांटा निकालनेवाला न हो तो पिता पुत्री की बुद्धी कर साध्वी कांटा निकाल सकती है परंतु इरक के लिये भगवन्त यह आज्ञा नहीं दी है) ॥ ३ ॥ साधु की आंख में कोई उड़ता हुआ जीव, मिरची आदिका बीज पार्थिव रज कंकर, धूल आदि आकर पड़ा हो उसे स्वयं साधु नहीं निकाल सकता हो § दूसरा कोई निकालनेवाला समदीक न हो तो उक्त प्रकार पिता पुत्री की बुद्धि कर साध्वी उसे निकालती हुई तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करती है ॥ ४ ॥ उसे ही साध्वी के पांव में तीक्ष्ण कांटा खीला कंकर कांच वगैरह लगा हो वह स्वयं उसे

उम्मायपत्त, उवसग्गपत्तं, साहिगरणं सपायच्छित्त, - भत्तपाणपडियाइक्खियं अट्ठजायं निग्गंथिं निग्गंथे गेण्हमाणे वा अवलंबमाणे वा नाइक्कमइ ॥ १२ ॥

छकप्पस्स पलिमथू पन्नत्ता तंजहा कोक्कुइए संजमस्स पलिमथू मोहारिए सच्चवय-

उल्लंघन नहीं करे ॥ ११ ॥ १ साध्वी किसी यक्ष-भूतादि व्यंतरादि देव के आवेश में आकर, २ वायु आदि रोग के जोर से उन्माद में आकर मस्ता में आई हो ३ स्वामि निंदादि के उपसर्ग कर भय भ्रांतमन व्याकुल हुई हो ४ अनंतानुबंधी क्रोध के वश हो मस्तक फिर गया हो, ५ अपने भाव मित्र के मान से भय भ्रांत बनी हो इन पांच कारणों से अह आहार पानी का त्याग कर मनोविकार भय मूर्च्छा में आकर मरण का कूप आदि में पड़ती हो [उसे संभालने वाली दूसरी साध्वी के भी सत्ता नहीं हो तब माता पुत्र की तुल्य कर] साधु उस को दया से संभालता हुआ सर्व से पकड कर रखता हुआ तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करता है ॥ १२ ॥ छ प्रकार के पलिमथू अर्थात् इच्छा वस्तु नाश करने वाले कहे हैं जैसे दही का मथन कर उस में से मक्खन को निकाल कर फैंकदे और तक्र का संग्रह कर वैसे पलीमंथू करने वाला संयमरूप मक्खन को फैंक कर असंयमरूप तक्र का संग्रह करता है-उसे पलीमंथू कहते हैं वे पलीमंथू छ प्रकार होते हैं तद्यथा १ शरीर की कुचेष्टा करने से संयम का पलिमथू (विनाश) होता है इस कुचेष्टा चपलता के चार भेद १ भाषा चपल, २ काया, चपल ३ स्थान चपल, और ४ मन चपल इसमें से भाषा चपल उसे कहते हैं मुख से सीटी आदि बजावे, भाषा का प्रदुस्त बनाकर मुग्ध श्रोताओं को प्रसन्न

उदयागिवा आकममाणिवा ओसुभमाणिवा गण्हमाणेवा अवलम्बमाणेवा नाइक्कमइ ॥८॥ निग्गथे निग्गथिं नाव आरुभमाणिवा ओरुभमाणिवा गण्हमाणवा अवलंबमाणेवा नाइक्कमइ॥९॥खित्तचित्तं निग्गथिं निग्गथ गण्हमाणवा अवलम्बमाणवा, नाइक्कमइ ॥१०॥ दित्तचित्त निग्गथ गण्हमाणवा अवलम्बमाणेवा, नाइक्कमइ ॥ ११ ॥ जक्खाइट्ठं,

काम प्रमाशय में (पानी सहित में) बिना कीचड़ के निमल पानीवाले जलाशय में पानी कीचड़ मिश्रित हुवे ढीले कीचड़वाले जलाशय में,पानी में कादवमें इत्यादि स्थान में डूबती हुइ दुस [वहां दूसरी साध्वीके स्था न हो ता विना पुरुष की बुद्धि कर] उस निकालता हुवा आज्ञा अतिक्रमे नहीं ॥ ८ ॥ साध्वी नाव में चढती उतरती पडती हो [वहां कोई साध्वी क सी समालनेवाली न हो वा माता पुत्र की बुद्धिकर] साधु उस पकड कर रखता हुवा आज्ञा का उल्लंघन नहीं करता है ॥ ९ ॥ साध्वी का वायु आदि रोग कर शून्य चित्त हुवा हो [उसरक्क दूसरा साध्वी क सी समालने समर्थ न हो , उस साधु माता पुत्र की बुद्धि से भगती पडती को पकड रखता हुवा तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करता है॥ १० ॥ कोई साध्वी किसी महालाभ की कथा सुन या महा हर्ष की बात सुन हर्षवश या शोकवश एकदम दिस चित्त स्थापन चित्तवाली बनगइ हो वह भगकर मार्गी हो आत्मघात वगैरह करने सज्ज हुई हो उसे (अन्य साध्वी सो क अभावसे,-माता पुत्र की बुद्धि कर) साधु पकड कर रखता हुवा तीर्थंकर की आज्ञा का

उम्मायपत्त, उवसग्गपत्ते, साहिगरणे सपायच्छित्ते, भत्तपाणपडियाइक्खिये अट्ठजाय निग्गंथिं निग्गंथे गेण्हमाणेवा अवलंबमाणेवा नाइक्कमइ ॥ १२ ॥

छकप्पस्स पलिमथू पन्नत्ता तंजहा कोक्कुइए संजमस्स पलिमथू मोहरिए सच्चवय-

वलंघन नहीं कर ॥ ११ ॥ १ साध्वी किसी यक्ष भूतादि व्यंतरादि देव के आवेश में आकर, २ वायु आदि रोग के जोर से उन्माद में आकर मस्ता में आई हो ३ व्याघ्र सिंहादि के उपद्रव्यकर भय भ्रांतवन व्याकुल हुई हो ४ अत्यन्त क्रोध के वश हो मस्तक फिर गया हो, ५ अपर प्रायश्चित के भान से भय भ्रांत बनी हो इन पांच कारनों से अथ आहार पानी का त्याग कर मनोविकार मय मूर्च्छा में आकर मग का कुवा आदि में पडती हो [जिसे संभालन वाली दूसरी साध्वी के नहीं वहां नहीं हो तब माता पुत्र की बुद्धिकर] साधु उस को हाथ से संभालता हुवा सर्व ने पकडकर रखता हुवा तीर्थंकर की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करता है ॥ १२ ॥ छ प्रकार के पलिमथू अर्थात् उत्तम वस्तु नाश करने वाले कहे हैं जैसे दही का मथन कर उस में से मक्खन को निकालकर फेंकदे और तक्र का संग्रह कर वैसे पलिमथू करने वाला संयमरूप मक्खन को फेंक कर असंयमरूप तक्र का संग्रह करता है-उन्हे पलिमथू कहते हैं वे पलिमथू ६ प्रकार होते हैं तद्यथा १ शरीर की कुचेष्टा करने से संयम का पलिमथू (विनाश) होता है इस कुचेष्टा चपल के चार भेद १ भाषा चपल, २ काया, चपल ३ स्थान चपल, और ४ मन चपल इसमें से भाषा चपल उसे कहते हैं मुख से सीटी आदि बजावे, भाषा का प्रदुस्थापना कर पुण्य श्रोताओं को प्रसन्न

थेरकप्प ठिइ ॥ १ ॥ त्तियामि ॥ कप्पे छट्ठो उद्देसओ सम्मत्तो ॥ ६ ॥

कप्पसुत्त सम्मत्त ॥ २५ ॥ * * * * * *

कर मग्न के पास कराबे ये स्थविर कल्पी सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि अहो जम्बू ! मैंने भगवंत श्री महावीर स्वामीजी से सुना तैसा तेरे से कहा ॥ इति छठा उद्देशा समाप्त ॥ ६ ॥

इति बृहद्कल्प सूत्र सपूर्ण ॥ २५ ॥

प्राय श्चित त्रिधि यत्र

नाम	भिन्न मास	लघु मास	गुरु मास	चौमासी लघु	चौमासी गुरु	छमासी लघु	छमासी गुरु
अर्थ	नीवी	पुरिमड्ढ	एकासना	आंबिल	उपास	बेला	तेला
प्रत्याख्यान प०	५	११	१११	४	५	६	४
छेद तथा तपादिन	२५	२७॥	३०	११०	१२०	१६५	१८०

* इति पञ्चविंशतितमम् *

॥ बृहद्कल्प सूत्र-द्वितीयछेद समाप्तम् ॥

वीर संवत २४४८ माघ वदी ७ वार चन्द्र

मुख्याधिकारी

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के शुद्धाचारी पूज्य श्री खूबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य स्व. तपस्वीजी श्री केवल ऋषिजी महाराज! आप श्रीने मुझ मायसे महा परिश्रम से हैदराबाद जैसा बड़ा क्षेत्र साधुमार्गीय धर्म में प्रसिद्ध किया व धर्मोपदेश से राजाबहादुर दानवीर लाला सुखदेव सहायजी ज्वाला प्रसादजी को धर्मप्रेमी बनाये उनके प्रतापसे ही शास्त्रोद्धार जैसा महा कार्य हैदराबाद में हुए इस लिये इस कार्य के मुख्याधिकारी आपही हुए जो जो भव्य जीवों इन शास्त्र द्वारा महालाभ प्राप्त करेंगे वे आपही के कृतज्ञ होंगे

शिशु अमोल ऋषि

उपकारी महात्मा

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज की सम्प्रदाय के कविवरेन्द्र महा पुरुष श्री तिलोक ऋषिजी महाराज के पाटवीय शिष्य वर्य, पूज्य पाद गुरु वर्य श्री रत्नऋषिजी महाराज!

आप श्री की आज्ञासे ही शास्त्रोद्धार का कार्य स्वीकार किया और आपके परमाशिर्वाद से पूर्ण कर सका इस लिये इस कार्य के परमोपकारी महात्मा आप ही हैं आप का उपकार केवल मेरे पर ही नहीं परन्तु जो जो भव्यों इन शास्त्रोद्वारा लाभ प्राप्त करेंगे उन सबपर ही होगा

दास अमोल ऋषि

स उ न्श पावन न्ना मार्ग पक्ष के परम पूज्य श्री कर र जा महाराज के शिष्यवर्य मधा ना शासन थे। नागचन्द्रजी महाराज।

इस शास्त्रोद्धार कार्य में आप श्री प्राचिन शुद्ध शास्त्र ई गन्ना और समय २पर आवश्यकीय नम सम्मात द्वारा सहा न्ते रहनेसेही मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका इस लिये केवल मैं ही नहीं परन्तु जो जो भव्य इन शास्त्रोद्धारा लाभ प्राप्त करेंगे वे सब ही आप के आभारी होंगे

बालब्रह्मचारी पूज्य श्री खूबा ऋषिजी महाराज के शिष्यवर्य, आर्य मुनि श्री चेना ऋषिजी महाराजके शिष्यवर्य बालब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी महाराज' आपने बड़े साहस से शास्त्रोद्धार जैसे महा परिश्रम वाले कार्य का जिस उत्साहसे स्वीकार किया था उस ही उत्साह से तीन वर्ष जितने स्वल्प समय में अहर्निश कार्य को अच्छा बनाने के शुभाशय से सदैव एक भक्त भोजन और दिन के सात घंटे लेखन में व्यतीत कर पूर्ण किया और ऐसा सरल बनादिया कि कोई भी हिन्दी भाषा सहज में समज सके, ऐसे ज्ञानदान के महा उपकार तले दब हुवे हम आप के बड़े आभारी हैं

सबकी तर्फ से

अपनी छती ऋद्धि का त्याग कर हैद्राबाद सीकन्द्राबादमें दीक्षा धारक बाल ब्रह्मचारी पण्डित मुनि श्री अमोलक ऋषिजी के शिष्यवर्य ज्ञानानंदी श्री देव ऋषिजी वैय्यावृत्यी श्री राज ऋषिजी तपस्वी श्री उदय ऋषिजी और विद्याविलासी श्री मोहन ऋषिजी इन चारों मुनिवरोंने गुरु आज्ञाका बहुमानसे स्वीकार कर आहार पानी आदि सुखोपचार का संयोग मिला दो प्रहर का व्याख्यान, प्रसंगीसे वार्तालाप, कार्य दक्षता व समाधि भाव से सहाय दिया जिस से ही यह महा कार्य इतनी शीघ्रता से लेखक पूर्ण सके इस लिये इस कार्य सहाय उक्त मुनिवरों का भी बडा उपकार है

पंजाब देश पावन करता पूज्य श्री सोहनलालजी, महात्मा श्री माधव मुनिजी, शतावधानी श्री रत्नचन्द्रजी तपस्वीजी माणकचन्दजी, कवीवर श्री अमी ऋषिजी सुवक्ता श्री दौलत ऋषिजी पं श्री नथमलजी, पं श्री जोरावरमलजी स्थविर श्री मानचन्द्रजी प्रवर्तिनी सतीजी श्री पार्वतीजी गुणज्ञ सतीजी श्री रंभाजी धोराजी सर्वज्ञ भंडार, भीनासरवाले कनीरामजी बहादरमलजी बाँठीया, लींबडी भंडार, कुचेरा भंडार, इत्यादिक की तरफ से शास्त्रों व सम्मति द्वारा इस कार्य को बहुत सहायता मिली है इस लिये इन का भी बहुत उपकार मानते हैं

इति

बृहद्कल्प सूत्र

समाप्तम्

वीराब्द २४४६ विजयादशमी